अनौपचारिका

समकालीन शिक्षा-चिन्तन की मासिक पत्रिका

वर्ष : ४५ अंक : ४ | चैत्र–वैसाख वि.सं.– २०७६ | अप्रेल, २०१९ | पृष्ठ –३२ | एक प्रति अठारह रुपए | RNI 43602/77

शब्द: कमला भसीन, चित्र: बिंदिया थापर

समिति कार्यकारिणी की बैठक संपन्न

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति की कार्यकारिणी की बैठक २४ मार्चे २०१९ को समिति भवन में रमेश थानवी की अध्यक्षता में संपन्न हुई। इसमें १३ माननीय सदस्यों ने भाग लिया। बैठक के प्रारम्भ में पिछली कार्यकारिणी की बैठक कि कार्रवाई विवरण की पुष्टि की गई।

समिति के सचिव अरविन्द ओझा ने इस वर्ष संपन्न हुए कार्यक्रमों का प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। इस प्रतिवेदन की एक छोटी सी पुस्तिका भी प्रकाशित की गई जिसे सभी सदस्यों द्वारा सराहा गया।

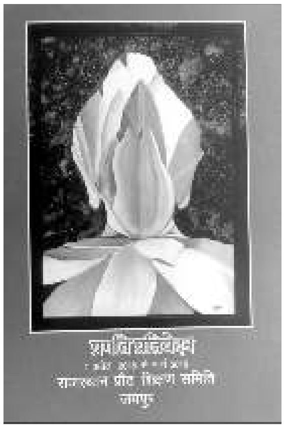

कोषाध्यक्ष अविनाश भार्गव ने २०१८-१९ का आय-व्यय का विवरण तथा आगामी वर्ष २०१९-२० के बजट को स्वीकृति के लिए सदन में सदस्यों के समक्ष प्रस्तुत किया। सभी सदस्यों ने इसे सर्व सम्मति से पारित किया।

बैठक में समिति के भावी स्वरूप पर विस्तार से चर्चा हुई। विशेष बात यह भी रही कि समकालीन शिक्षा की दशा-दिशा पर अध्यक्ष रमेश थानवी द्वारा शिक्षाविद् डॉ. ए.के. जलाद्दीन, डॉ. गोविन्दा तथा श्रीमती वर्षादास के साक्षात्कार की वीडियो रिकॉर्डिंग की क्लिपिंग्स दिखाई गयीं। सदस्यों ने अपनी-अपनी राय व्यक्त करते हुए कहा कि समिति को लोक-जागरण से संबंधित कार्यक्रम करने चाहिए। विभिन्न जिला समितियों को सुदृढ़ करने के लिए भी अधिक प्रयास करने होंगे।

बैठक में समिति के संस्थापक एवं पूर्वअध्यक्ष ललितकिशोर लोहमी की गरिमामय उपस्थिति का लाभ मिला। रमेश थानवी, अरविन्द ओझा, अविनाश भार्गव, धुव यादव, श्रीमती सुनीता तंवर श्रीमती वर्षादास, श्रीमती आशा बोथरा, श्रीलाल मोहता, श्रीमती उषा बापना, एवं श्रीमती शारदा जैन, ओमप्रकाश टाक, राघवेन्द्र देव शर्मा आदि सदस्य उपस्थित थे। ❑

''हिन्दू गुलाम का हिन्दुस्तान कहां है?
नापाक दिलों का पाकिस्तान कहां है?
खो चुके सभी जब भूले भाईचारा, अब जर-जमीन कुछ भी है नहीं तुम्हारा।
झूठे टुकड़ों में बिका धर्म बेचारा, ईमान तुम्हारा फिरता मारा-मारा।।
दाढ़ी-चोटी में अब इन्सान कहां है?
दोनों ही लड़-लड़ मरे मुल्क सब खोया, साहिब के कुत्ते बने मुल्क पर रोया।
मादरे-हिन्द ने रो-रो बदन भिगोया, पर तुमने मन का मैल न कणभर धोया।।
अन्धों! बतलादो अब 'ईमान' कहां है?
सदियों का है इतिहास अक्ल सिखलाता, पर मूरख मन में चेत न कुछ भी लाता।
जो भेद-नीति से तुम्हें लूटता खाता, वह झूठे टुकड़े देकर तुम्हें रिझाता।
अपने हित-अनहित की पहचान कहां है?
भाई-भाई मिल उठो! 'शत्रु' भग जाये, अपना घर सचमुच 'अपना घर' कहलाये।
नापाक-पाक का भेद न रहने पाये, चालीस कोटि जन अब न गुलाम कहाये।।
ढूंढो! खोजो! दोनों की 'शान' कहां है?
नापाक दिलों का पाकिस्तान कहां है?
हिन्दू गुलाम का हिन्दुस्तान कहां है?''

-स्वामी 'सत्यभक्त' की कविता जो १९४३ सितंबर के 'संगीत' में छपी।

समानो मन्त्र: समिति: समानी
समानं मन: सहचित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये व:
समानेन वो हविषा जुहोमि।।

समानी व आकूति:
समाना हृदयानि व:।
समानमस्तु वो मनो
यथा व: सुसहासति।। – ऋग्वेद

अनौपचारिका

समकालीन शिक्षा–चिन्तन की पत्रिका

वर्ष : ४५ अंक : ४

अप्रेल २०१९

चैत्र–वैसाख वि.सं.–२०७६

❑

संस्थापक संपादक एवं संरक्षक

रमेश थानवी

❑

कार्यकारी संपादक

प्रेम गुप्ता

❑

प्रबंध संपादक

दिलीप शर्मा

❑

- एक प्रति अठारह रुपये
- वार्षिक व्यक्तिगत एवं संस्थागत सहयोग राशि दो सौ रुपये
- मैत्री समुदाय की सहयोग राशि दो हजार रुपये

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति

७–ए, झालाना डूंगरी संस्थान क्षेत्र

जयपुर–३०२ ००४

फोन- २७००५५९, २७०६७०९, २७०७६७७

ई मेल – raeajaipur@gmail.com

आवरण बिंदिया थापर
कमला बसीन के सौजन्य से

क्रम

धरोहर :		३
बातचीत :	चुनावी घोषणाओं में शिक्षा कहां है?	५
आलेख :	सत्ता और आज्ञापालन	७
चिंतन :	सही उत्तर का बेतुकापन	१०
लेख :	डर का डर	१२
वात्सल्य :	आद्या के बहाने अपने के लिए...	१४
कविताएं :	गुजराती कवि निलेश काथड़ की कविताओं का अनुवाद	१५
१६	केशव शरण की गजल	
स्मृतिशेष :	दृढ़ संकल्प व करुणा की पर्याय: शिप्रा शर्मा	२३
परिक्रमा–१ :	विज्ञान मेला – २०१९	२६
परिक्रमा–२ :	साक्षरता प्रशिक्षण–१	२७
परिक्रमा–३ :	साक्षरता प्रशिक्षण–२	२८
परिक्रमा–४ :	ग्रामसखी संवाद	२९
परिक्रमा–५ :	विद्यालयों में ई वेस्ट आधारित संवाद	३०
गतिविधियां :	विश्व रंगमच दिवस पर आयोजन	३१
	कवि भवानीप्रसाद मिश्र का जन्मोत्सव	३२

चुनावी घोषणाओं में शिक्षा कहां है?

मित्रो,

भारत के प्रसिद्ध शिक्षाविद् कृष्णकुमार जी ने इण्डियन एक्सप्रेस में एक लेख लिखकर हमारा ध्यान आकर्षित किया है कि आज चुनावी घोषणाओं में शिक्षा कहां है? वे पूछते हैं कि शिक्षा कोई मुद्दा क्यों नहीं है। कृष्णकुमार जी ठीक से जानते हैं कि भारत में शिक्षा की स्थिति क्या है? वे न केवल अच्छे विश्लेषक हैं बल्कि समय-समय पर सबको आगाह भी करते रहते हैं कि शिक्षा कहां जा रही है और शिक्षा को कहां जाना चाहिये। दुर्भाग्य यही है कि हमारे राजनेता कृष्णकुमार जी की बात न सुनते हैं न समझते हैं।

आज बड़े-बड़े राजनीतिक दलों के लुभावने चुनावी घोषणा-पत्र जनता के सामने रखे जा रहे हैं। देश में गरीबी और रोजगार के विषयों के अलावा विकास के बड़े भ्रामक मुद्दे सामाने आ रहे हैं। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि शिक्षा जैसा अहम् विषय किसी भी राजनेता को नजर ही नहीं आ रहा है। उनकी आदत हो गयी है कि वे अपनी आमदनी की बात करें और नफा-नुकसान की भाषा में हर चीज को नापते-तोलते रहें। इसी आदत के कारण शिक्षा आज उद्योग बन गयी है।

आज शिक्षा का स्तर बुरी तरह गिर गया है। शिक्षा की सही समझ न समाज में कहीं दिखाई दे रही है, न घरों में और न शैक्षिक संस्थानों में। मजेदार बात यह है कि संसद से भी शिक्षा नदारद है। यहां तक कि अभी हाल ही में नेशनल इलेक्शन वॉच और एडीआर की रिपोर्ट के अनुसार सांसदों के शपथ-पत्रों का विश्लेषण कर पाया कि वर्तमान में २४ प्रतिशत सांसद ही बारहवीं कक्षा तक बमुश्किल पढ़े हैं, जबकि कुछएक तो निरक्षर भी हैं।

साक्षरता की बात छोड़ भी दें तो तेजी से बढ़ती गरीबी और सामाजिक विषमता पर नजर जरूर जाती है। विषमता ने सामाजिक सौहार्द को कम किया है और इंसानियत का दिन-ब-दिन विघटन किया है। शिक्षा का काम सांस्कृतिक उन्नयन था। समाज का भी और मनुष्य का भी। मगर इस चुनावी शोर में कला, संस्कृति जैसे विषयों को भी पूरी तरह नजरअंदाज कर दिया गया है। तथाकथित विकास की दौड़-भाग में सरकार की मंशा शहरों को औद्योगिक नगरी बनाने की ही दीख रही है। अभी पिछले दिनों **भंभोरिया** गांव के क्षेत्रीय भ्रमण के दौरान जो अनुभव हुआ उसने तो

बड़े विस्मय में डाल दिया है। पूरा का पूरा गांव देखने में किसी मैट्रो सिटी से कम नहीं था। बड़ी-बड़ी कम्पनियों ने इस गांव पर पूरा कब्जा कर लिया है। बाजार अपने पांव पसार रहा है। गांवों को उपभोक्ता संस्कृति में रंगा जा रहा है। शहरों की देखा-देखी करके गांव अपनी अस्मिता को भुलाते नजर आ रहे हैं। कोई भी समाज अपनी अस्मिता को भुलाने लगता है तो शिक्षा की बजाय वह अशिक्षा का शिकार हो जाता है। आज का सच यही है।

आजादी के सत्तर साल बाद भी आज देश में भय और आशंका का माहौल है। आज यह चिंता का विषय बन गया है कि समाज से भाईचारा कैसे विलुप्त हो गया। प्रेम हमारा धर्म था। सहजीवन में हम विश्वास करते थे। द्वेष और घृणा से हम दूर रहते थे। तब फिर भला अचानक युद्ध हमारे सामने आकर क्यों खड़ा हो गया? हमने सपना देखा था अमन से रहने का, विद्वेष को भुलाकर प्रेम के साथ जीने का। यह सपना **वसुधैव कुटुम्बकम** का था। लेकिन आज मति मारी गयी है!!

आज हमें शिक्षा का समाज से रिश्ता क्या है जैसे कई प्रश्नों के उत्तर भी खोजने हैं। आज न केवल नक्शों में ही देश का विभाजन हुआ है, बल्कि बालकों और बड़ों के दिलों में भी दरारें पड़ गयी हैं। तभी तो आज के बालक **बदला लेने की कसमें** बचपन में ही खाने लगे है। इस प्रकार का व्यवहार पूरी जिन्दगी बदले की आग में झुलसते रहने को हमें अकेला छोड़ देता है। अब कुल जमा परिणाम जो होता है उसका नाम **आतंकवाद** है। अभिभावकों की जानकारी के बिना बड़ी-बड़ी कम्पनियों ने ऐसे खिलौने बना दिये हैं जिनमें गोली की धांय-धांय सुनायी देती है। बच्चों को सिखाया यह जा रहा है कि जीतने का अर्थ दूसरों को हराना है। हराने का अर्थ घनघोर हिंसा से भरा है। शिक्षा यहां कुछ करिश्मा कर सकती है। बालकों को हार-जीत के सही अर्थ समझा सकती है। लेकिन जब शिक्षा ही नदारद हो तो कोई भी समाज कैसे अपने उन्नयन की आशा कर सकता है?

अब प्रश्न यह है कि राजनेताओं की शिक्षा कौन करे? प्रश्न यह भी है कि राजनीति में शिक्षा अपना घर कैसे बनाये? शिक्षा का काम **नीति** के करीब रहना है और नीति से दूर जाना राजनीति का काम नहीं है। नीति हर राज्य का एक धर्म होती है। उस धर्म में **मानवता सर्वोपरि** होती है। **इंसानियत का उन्नयन सर्वोपरि होता है। बालकों के लिये पूरी खुली बांछों वाला वात्सलय सर्वोपरि होता है। राजधर्म में लोक से सीखने की आवश्यकता सदा समाहित होती है। राज को यह सीखना चाहिये कि लोक बड़ा है और तभी कोई भी राज्य सच्चे लोकतंत्र की स्थापना कर सकता है।** तो आज कोई हमारे राजनेताओं से कह दे कि कृष्णकुमार जी की बात सुन भी लो और शिक्षा को अपनी घोषणाओं में और जीवन मे जगह दे दो। ❑ **प्रेम गुप्ता**

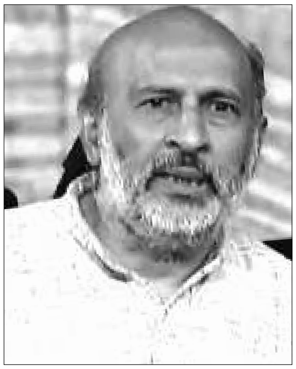

सत्ता और आज्ञापालन

❑

अरविन्द गुप्ता

भाई अरविन्द गुप्ता का पूरा जीवन शिक्षा को समर्पित है। वे हर पल बालकों की शिक्षा के बारे में सोचते रहते हैं और समाज में बढ़ते हुए मानवीय विघटन के प्रति चिंतित रहते हैं। सही मुद्दों को उठाते रहते हैं और ऐसा करके वे बार-बार समाज को एवं देश के शिक्षा तंत्र को आगाह करते हैं कि अपनी आदत बदल लो और अपने स्वभाव को थोड़ा बाल वत्सल और लोक वत्सल बना दो। मगर नये समाज का शिक्षा तंत्र है कि मानता ही नहीं। यहां प्रस्तुत है अरविंद भाई का अत्यंत सामयिक, प्रासंगिक और मौजूं आलेख। ❑ स.

लोग हत्या क्यों करते हैं? आज्ञा पालन के नाम पर लोग नरसिंहार क्यों करते हैं? इंसान कत्ल क्यों करते हैं? आदेश दिए जाने पर फौज और पुलिसवाले बिना पलक झपकाये दुश्मन को मौत के घाट क्यों उतार देते हैं? रोजाना इस प्रकार की घटनाएं घटती हैं। इंदिरा गांधी के हत्या के बाद सिखों का कत्लेआम, बाबरी मस्जिद की घटना, गुजरात के दंगों में हजारों निरीह, बेकसूर लोगों की जान गयी। मुंबई में २६ नवंबर २००८ के फिदायीन हमले में सैकड़ों जाने गयी। चंद महीने पहले ५०० नक्सलियों ने घात लगाकर पुलिस दस्ते पर हमला कर पुलिस वालों को मार डाला और सारे हथियार लूट लिए। कुछ वर्ष पहले जब आतंकियों ने अमरीका की 'वर्ल्ड ट्रेड सेन्टर' पर घमासान हमला बोला तब दुनिया का सबसे शक्तिशाली राष्ट्र भी अपनी सुरक्षा में नाकामयाब रहा।

१९३३ से १९४५ के बीच साठ लाख यहूदियों को गैस की भट्टियों में झोंका गया। इस नरसंहार का नक्शा शायद हिटलर के दिमाग में उपजा हो पर इस कुकर्म का क्रियान्वयन एक ऐसी व्यवस्था ने किया जिसमें हजारों लोग हिटलर का आदेश मानने को तैयार थे। जर्मनी की फौज को आज्ञा पालन की कड़ी ट्रेनिंग दी जाती थी। 'आज्ञा-पालन' के नाम पर हिटलर की फौज ने लाखों बेगुनाह लोगों को बिना पलक झपके मौत के घाट उतारा।

नात्सियों द्वारा यहूदियों का कत्लेआम दुनिया का सबसे बड़ा नरसंहार माना जाता है, परंतु छोटे स्तर पर इस प्रकार की घटनाएं आम बात हैं। साधारण नागरिकों को धर्म, जाति, राष्ट्र, देशभक्ति और भाषा के नाम पर एक-दूसरे को मारने के लिए लगातार उकसाया जाता है। 'आज्ञा-पालन' लोग अपनी ड्यूटी समझते हैं। 'आज्ञा-पालन' एक महान गुण समझा जाता है। पर अगर 'आज्ञा पालन' का दुरुपयोग कत्लेआम और नरसंहार के लिए किया जाए तो यह निश्चित रूप से एक बहुत दुर्भाग्यपूर्ण बात होगी। यह भी मान्यता है कि अगर लोग समाज में 'आज्ञा-पालन' नहीं करेंगे तो समाज का ढांचा चरमराने लगेगा। इसके लिए कभी-कभी अनैतिक आदेशों का भी पालन करना जरूरी है। परंतु मानवतावादी मानते हैं कि लोगों को अनैतिक आदेशों का बहिष्कार करना चाहिए।

क्या लोग मूलत: क्रूर होते हैं। मनुष्य की लंबी विकास यात्रा के दौरान शायद 'क्रूरता' और 'हिंसा' का कुछ रोल रहा हो, पर क्या आज के युग में इसका कुछ महत्व है? बहुत से चिंतकों ने मनुष्य को मूलत: 'अच्छा' माना है। उनके अनुसार परिस्थितियां ही लोगों को ढालती हैं। लोग जन्म से ही चोर, उचक्के, डाकू, आतंकवादी नहीं होते पर परिस्थितियां ही उन्हें

ऐसा बनाती हैं और बदली हुई अच्छी सामाजिक परिस्थितियां उन्हें और भी अच्छा नागरिक बनाती हैं। इन मान्यताओं के परीक्षण के लिए १९६० के दशक में एक महत्वपूर्ण प्रयोग किया गया जिसका विस्तृत उल्लेख यहां किया जा रहा है।

यह प्रयोग अमरीका के **येल विश्वविद्यालय** में किया गया। प्रयोग सरल था। उद्देश्य 'सजा' का 'सीखने' पर क्या प्रभाव होता है, इसे समझना था। प्रयोग में दो मुख्य पात्र थे – एक 'टीचर' और दूसरा 'छात्र'। 'छात्र' को कमरे में लाकर उसे कुर्सी पर बिठाया जाता और फिर उसके हाथों को बांध दिया जाता। उसके पश्चात् बिजली के झटके देने के लिए उसकी कलाई पर एक 'इलेक्ट्रोड' फिट किया जाता। 'छात्र' का काम था जोड़ीदार शब्द सीखना- जैसे ताला-चाबी, जूता-मोजा आदि।

अगर 'छात्र' गलत उत्तर देता तो 'टीचर' सजा के लिए उसे बिजली का झटका देता। 'टीचर' बिजली के झटके की तीव्रता को १५-वोल्ट से बढ़ाकर ४४०-वोल्ट तक ले जा सकता था। प्रयोग का उद्देश्य यह जानना था कि एक ठोस स्थिति में कोई इंसान आदेश मिलने पर किसी दूसरे इंसान को कितना अधिक कष्ट दे सकता है।

अगर 'छात्र' गलत उत्तर देता तो 'टीचर' सजा के लिए उसे बिजली का झटका देता। 'टीचर' बिजली के झटके की तीव्रता को १५-वोल्ट से बढ़ाकर ४४०-वोल्ट तक ले जा सकता था। प्रयोग का उद्देश्य यह जानना था कि एक ठोस स्थिति में कोई इंसान आदेश मिलने पर किसी दूसरे इंसान को कितना अधिक कष्ट दे सकता है। कब छात्र 'टीचर' के आदेश की अवहेलना करेगा और कब टीचर छात्र को शारीरिक सजा का शिकार बनायेगा? टीचर यह जानता था कि सजा उसके हाथ मे है और यह भी सच है कि टीचर का मन सजा देकर कष्ट पहुंचाने को उतावला भी था।

जब 'छात्र' को ७५-वोल्ट का शॉक लगता तो वो सिर्फ एक 'आह' भरता। १२०-वोल्ट लगने पर वो दर्द होने की शिकायत दर्ज करता। १५०-वोल्ट लगने पर वो प्रयोग छोड़ने की दलील करता। जैसे-जैसे शॉक की तीव्रता बढ़ती जाती उसकी भावनात्मक चीत्कारें भी साथ-साथ बढ़ती जाती। २८५-वोल्ट का शॉक लगने पर 'छात्र' गहरे दर्द से कराहने लगता।

प्रयोग में देखा गया कि बहुत से 'टीचर' अपने 'छात्र' की आहों और कराहटों के बावजूद शॉक की तीव्रता बढ़ाते जाते। जिन १००० 'टीचर' के साथ यह प्रयोग किया गया उनमें से ७०० ने अपने छात्रों को शॉक दिया। इस प्रयोग की सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि सारे 'टीचर' दरअसल भोले-भाले साधरण लोग थे। वो केवल प्रयोग में भाग लेने के लिए आए थे। प्रयोग में 'छात्र' का रोल एक प्रोफेशनल एक्टर ने निभाया था। वास्तव में 'छात्र' यानि एक्टर को कोई शॉक नहीं लग रहा था। वो केवल उसका अभिनय कर रहा था।

प्रयोग अत्यंत वैज्ञानिक तरीके से किया गया। **येल विश्वविद्यालय** के छात्रों को इसमें बहुत आसानी से 'टीचर' या 'छात्र' के रूप में शामिल किया जा सकता था। पर इसकी संभावना थी कि उनमें से कुछ ने इसके बारे में सुन रखा हो। इसलिए इस प्रयोग के लिए लोगों को आम समाज से लेना ही बेहतर समझा गया। प्रयोग में भाग लेने वालों के लिए अखबार में एक इश्तहार निकाला गया। उन्हें 'याददाश्त और सीख' के इस प्रयोग में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया गया। भाग लेने वालों को थोड़ा पारिश्रमिक भी देने का ऐलान किया गया। प्रयोग में भाग लेने वाले अलग-अलग पेशे के लोग थे। उनमें से ज्यादातर क्लर्क, हाई स्कूल टीचर, सेल्समैन, इंजीनियर और मजदूर थे।

इस प्रकार के व्यवहार को किस तरह समझा जा सकता है?

बहुत से 'टीचर' ने अपने 'छात्र' को अधिकतम शॉक दिया। क्या वे सभी बहुत क्रूर प्रकृति के थे? दो-तिहाई सहभागियों को 'आज्ञाकारी' लोगों की श्रेणी में डाला जा सकता है – क्योंकि वे रुके नहीं और 'छात्र' को ज्यादा-से-ज्यादा शॉक देते चले गए। पर यह सभी लोग साधारण नागरिक थे- कोई क्रिमनल हिस्ट्री-शीटर नहीं थे। इस नतीजे को कैसे समझा जाए? क्या क्रूरता और अत्याचार मानव जाति का अभिन्न अंग हैं। क्या मानव के विकास में इन गुणों का एक

अहम रोल था? क्या अलग-अलग धर्मों का इंसान की नैतिकता पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा?

अब प्रश्न यह उठता है कि प्रयोगशाला में किए गए प्रयोग और नात्सी कैम्पों में हुए नरसंहार में कोई संबंध है? वैसे दोनों स्थितियां काफी अलग लगती हैं परंतु कई मायनों में उनमें काफी समानता है। 'आज्ञाकारी' होने का मतलब है किसी और के हुक्म का पालन करना, और अपने किये की स्वयं जिम्मेदारी न लेना। यानि अपनी नैतिकता को ताक पर रखकर, आंख मूंदकर हुक्म और आदेश का पालन करना। यह सोचना भी नहीं कि तुम्हारे कृत्य का इंसानियत पर क्या प्रभाव पड़ेगा। ऐसी अवस्था में लोग बिना सोचे-समझे, अपने विवेक को ठुकराकर तानाशाही आर्डर मानने लगते हैं।

इस पूरे प्रयोग का बुनियादी सार यह है - बिना किसी क्रिमनल हिस्ट्री वाले साधारण लोग, किसी असाधारण घातक प्रक्रिया में आसानी से एजेंट बन सकते हैं। बहुत कम लोगों में ही 'अथॉरिटी' या 'सत्ता' को चुनौती देने का दम होता है। जिन अमरीकी पायलटों ने वियतनाम में बच्चों के गांवों पर बम बरसाए उन्होंने यह काम 'देशभक्ति' के लिए किया। जो आतंकवादी बेकसूर लोगों की धर्म, देश, जाति के नाम पर हत्या करते हैं वे भी इसी प्रकार की दलील देते हैं।

१९८४ नामक उपन्यास के क्रांतिकारी लेखक जार्ज ऑरवेल ने इस स्थिति का बयां इन शब्दों में किया: 'मैं जब यह लिख रहा हूं तब कई बहुत पढ़े-लिखे संभ्रांत लोग मेरे ऊपर हवाई जहाजों में उड़ रहे हैं और मुझे मारने की कोशिश कर रहे हैं। उनकी मुझ से कोई दुश्मनी नहीं है और मुझे भी उनसे कोई गिला-शिकवा नहीं है। वे केवल अपनी 'ड्यूटी' निभा रहे हैं। मेरे ख्याल से उसमें से बहुत से नेक लोग होंगे जो अपनी निजी जिंदगी में किसी की हत्या करने की बात सोच भी नहीं सकते होंगे। पर अगर उसमें से किसी का फेंका हुआ बम मेरी खोपड़ी पर गिर जाए तो उसे उसका कुछ गम न होगा और वो चैन की नींद सोएगा।'

येल विश्वविद्यालय के इस प्रयोग से हम कई बातें सीख सकते हैं- खासकर बच्चों की शिक्षा को लेकर। अधिकांश स्कूलों में सुबह की प्रार्थना होती है। हरेक प्रार्थना का उद्देश्य भगवान, गुरु और माता-पिता की सत्ता के सामने मत्था टेकने की दलील होती है। बाद में राजसत्ता इसी ट्रेनिंग का लाभ उठाती है - देशभक्ति, धर्म आदि का राग अलापती है, युवाओं को फौज में भरती करती है जिससे कि वो 'ग्लोबल आतंकियों' का सफाया कर सकें। ❑

कविताएं

शलभ श्रीराम सिंह की कविता

जिस दिन अच्छी कविता लिखोगे
पागल करार दे दिए जाओगे सहसा।
जिस दिन अच्छी कविता लिखोगे
मार दिए जाओगे अचानक।
जिस दिन अच्छी कविता लिखोगे
जिंदा जला दिए जाओगे उसी दिन।
जिस दिन अच्छी कविता लिखोगे
ईश्वर में तब्दील कर दिए जाओगे चुपचाप।❑

गोरख पाण्डे की कविता

वे डरते है
किस बात से डरते हैं वे
तमाम धन-दौलत, गोला-बारूद
पुलिस-फौज के बावजूद?
वे डरते हैं कि
एक दिन
निहत्थे और गरीब लोग
उनसे डरना बंद कर देंगे!!❑

अलाव से आभार

सही उत्तर का बेतुकापन !

❑

ज्योत्सना विजापुरकर

ज्योत्सना विजापुरकर टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फण्डामेंटल रिसर्च में पढ़ाती हैं। वे विज्ञान के शिक्षण के क्षेत्र में पूरे देश में जानी जाती हैं। कारण यह है कि वे निरंतर शैक्षणिक समस्याओं या गतिविधियों के बारे में सोचती हैं। नई-नई पहेलियां बूझती हैं और कई शिक्षकों का मार्ग प्रशस्त कर देती हैं। यह अलग बात है कि वे अंग्रेजी में सोचती हैं और लिखती भी अंग्रेजी में ही हैं, लेकिन अपने बहुभाषी होने के इल्म का वे कक्षाओं में बहुत सदुपयोग करती हैं। यहां प्रस्तुत लेख हमारी शैक्षणिक प्रक्रियाओं और प्रविधियों पर एक टिप्पणी है। सही उत्तर की तलाश सदियों से है मगर वह सही उत्तर आज तक किसी मिला नहीं है। उत्तरों का सही होना एक बेतुका मायाजाल है जिसे दुनियां की सारी शिक्षा व्यवस्थाएं अपने माथे पर ढोती फिर रही हैं। ❑ सं.

मैं चाहूंगी कि पाठक इस लेख को पढ़ने से पहले कुछ देर ठहर कर उन तमाम कामों के बारे में सोचें जो उन्होंने पहले कभी सीखे थे जैसे- साईकिल चलाना, खाना बनाना, गाना गाना और अपनी जेब के पैसों की गिनती करते हुए हिसाब-किताब रखना आदि-आदि। जो भी हो, कुछ देर के लिए उस समय को याद करिए कि आपने सब कुछ सही-सही करने के लिए कितने प्रयास किए। किस तरह आपने अपने हर प्रयास में कभी कुछ सही किया तो कभी कुछ गलत।

शायद आपने किसी की मदद भी ली होगी, शिक्षक, अभिभावक, साथी, रिश्तेदार या किसी की भी। आपने शायद यह महसूस भी किया होगा कि आपने जो सीखा उसके साथ-साथ यह भी सीखा कि सीखा कैसे जाता है या सीखना क्या होता है या सीखना कैसे होता है। आप शायद बहुत शौक से अपने उन सारे प्रयासों, कोशिशों और गलतियों को याद भी करते होंगे। आप महसूस कर सकते हैं कि सीखना आनंद का एक हिस्सा था न कि केवल अंतिम जीत। जब आप किसी चीज में महारत हासिल करने का प्रयास करते हैं तब अत्यंत लगन और रुचि से कार्य कर रहे होते हैं।

जब तक कोई काम अपनी पहुंच से बाहर न हो तब तक हम अपनी हर सोच और हर प्रयास या किसी की मदद से उसके करीब पहुंचने लगते हैं। हम उस काम में लगे रहते हैं और उस अनुभव का आनंद लेते हैं। जिस पहेली को हम एक बार सुलझा लेते हैं उसके बाद हम उसे दुबारा नहीं सुलझाते इसके पीछे भी एक कारण है क्योंकि वह पहेली हमें अब उलझाती नहीं है।

अब आप सोचिए कि स्कूल के दिन कैसे थे और आज कैसे हैं? क्या आपको किसी समस्या का हल ढूंढ़ने का मौका मिला था? क्या आपके शिक्षक आपकी मदद करते थे या केवल आपको सही या गलत ठहरा देते थे!! सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि क्या गलत उत्तर की उपेक्षा की जाती थी? क्या आपके गलत उत्तर के लिए आपको सजा दी जाती थी, प्रताड़ित किया जाता था याकि मजाक बनाया जाता था? साथ ही क्या इन सबके चलते सीखने की प्रक्रिया का अंत हो जाता था? जो शर्मिन्दगी अपमान और तिरस्कार आपने महसूस किया उसके बारे में क्या कहा जाये? फिर भी पाठ-दर-पाठ, स्कूल-दर-स्कूल यही होता है। दरअसल एक गलत उत्तर की प्रतिक्रिया उपेक्षा या दंड ही होता है। उत्तर ढूंढ़ने

का प्रयास न केवल आनंददायक बल्कि सीखने की प्रक्रिया का सबसे अच्छा हिस्सा भी है। सीखना हमारी सोच और एकाग्रता को बढ़ाता है। हमारी सोच को लचीला बनाता है और शायद हमें हमारे बारे में भी कुछ बताता है। दूसरे शब्दों में समाधान की ओर ले जाने वाला रास्ता भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि समाधान। अगर सीखने के रास्ते को छोड़कर केवल समाधान पर ध्यान दें तो आप शिक्षार्थी को सीखने के एक बहुत बड़े अवसर से वंचित कर देंगे।

इस तरह की परिपाटी में केवल शिक्षार्थी ही नहीं बल्कि शिक्षक भी बहुत कुछ खो देते हैं– एक शिक्षार्थी के मस्तिष्क को पढ़ पाने का अवसर चाहे वह किसी समस्या के सुंदर समाधान के रूप में हो, कुछ ऐसा जो शिक्षक या पुस्तक के लेखक के दिमाग में भी न आया हो या फिर वह काल जिसके चलते शिक्षार्थी किसी समाधान पर नहीं पहुंच पाया। **शिक्षार्थी द्वारा की गयी गलतियां शिक्षकों के लिए चमत्कारिक खिड़कियां हैं जिनसे वे शिक्षार्थी के दिमाग में चल रहे विचारों को जान सकते हैं।** खासकर उन छोटे शिक्षार्थियों के दिमाग को जिन्हें स्वयं यह नहीं पता होता कि किसी बात को वे समझ पाये हैं या नहीं।

एक शिक्षक के रूप में जब हमें यह अंदाज हो जाता है कि कोई शिक्षार्थी क्या और कैसे सोच रहा है तो हम वह अंतर्दृष्टि अपने अध्यापन में सम्मिलित कर सकते हैं और ऐसा करके हम अपने अध्यापन कार्य को उबाऊ होने से बचा सकते हैं। एक ही पाठ को बार–बार एक ही तरह से पढ़ाने की बजाय उन्हें पढ़ाने का नया तरीका भी हमें मिल सकता है। कठिन पाठों को जिन्हें कुछ ही छात्र समझ पाते हैं को भी सरल तरीके से पढ़ाने का कौशल आ सकता है।

अधिकांशत: यही बात हमारे घरों में भी होती है। दुर्भाग्य से स्कूल की यह सभ्यता हर तरफ फैल गयी है। यह आम बात है चाहे स्कूल हो या घर बच्चों से सही उत्तर पाने की अधीरता हर कहीं है। इस तरह से हम सीखने को संबल नहीं दे रहे हैं। जिन लोगों ने अपने सीखने के अनुभवों को महसूस किया है वे इस बात से सहमत होंगे कि सीखना वक्त लेता है। इसके लिए धैर्य की जरूरत है। छात्र और शिक्षक दोनों को धैर्य रखना पड़ता है। यह आपको किसी भी काम के लिए धैर्य रखने की सीख देता है। और धैर्य एक ऐसा जीवन कौशल है जो लंबे समय तक आपके साथ रहता है और आपको मदद करता है। परंतु इस दर्जे का धैर्य हमारे अध्यापन क्षेत्र में बहुत कम देखने को मिलता है। वास्तव में हमारे तंत्र में समाहित अधैर्य की अवस्था बड़ी भयावह है। नए पाठ्यक्रम की विषयवस्तु तैयार करने के लिए इतना कम समय दिया जाता है कि आवश्यक शोध, गंभीर विचार–विमर्श या विस्तृत क्षेत्र परीक्षण के लिए समय ही नहीं मिल पाता है जो कि विषयवस्तु को पुष्ट कर सके। स्कूल के एक साल के पाठ्यक्रम में अधीरता से आश्चर्यजनक मात्रा में सामग्री भर दी जाती है जिसके लिए एक अतिव्यस्त अध्यापन कार्यक्रम बनाया जाता है जहां शिक्षकों और छात्रों को अवधारणा पर ध्यान देने का समय ही नहीं मिलता। छात्रों से अपेक्षा की जाती है कि वे पूछे गए प्रश्न का सटीक और सही उत्तर भर दे दें। प्रक्रिया और समझ की तफसील में जाने का न तो किसी के पास समय है और न ही किसी को इसकी जरूरत महसूस होती है। लेकिन इन सबका अंत क्या है? यह एक ऐसा प्रश्न है जो हम सबको अपने आप से करना चाहिए और बड़े धैर्य के साथ इसका उत्तर ढूंढ़ने की कोशिश करनी चाहिए। असल प्रश्न यह है कि सही उत्तर को सही ठहराने अथवा न ठहराने की स्वतंत्रता सीखने वाले के पास है कि नहीं? बहुत बार यह भी होता है कि सही उत्तर के बारे में सिखाने वो स्वयं भी भ्रम में रहते हैं। सही और गलत को सुनिश्चत करना और उस पर अड़े रहना एक अत्यंत बेतुकी बात है और साथ ही विचारणीय भी।❑ **अनुवाद – रचना सिद्धा**

एक शिक्षार्थी के मस्तिष्क को पढ़ पाने का अवसर चाहे वह किसी समस्या के सुंदर समाधान के रूप में हो, कुछ ऐसा जो शिक्षक या पुस्तक के लेखक के दिमाग में भी न आया हो या फिर वह काल जिसके चलते शिक्षार्थी किसी समाधान पर नहीं पहुंच पाया।
शिक्षार्थी द्वारा की गयी गलतियां शिक्षकों के लिए चमत्कारिक खिड़कियां हैं जिनसे वे शिक्षार्थी के दिमाग में चल रहे विचारों को जान सकते हैं।

डर का डर

❑

ओम शर्मा

'नहीं, फोन पर तो सब नहीं बताया जा सकता है इसलिए बेहतर हो आप यहाँ आ जाएं... कितनी देर में आ सकते हैं... आधा घन्टे में... ओके' यह आवाज बिटिया के स्कूल की उप-प्राचार्या **मिस मथायस** की थी जिन्होंने मोबाइल पर अंग्रेजी में बात करने से पहले मेरे नाम और **क्वीन स्कूल** में नौवीं कक्षा में पढ़ने वाली **वृंदा** का मेरी बेटी होना सुनिश्चित कर लिया था। उनकी आवाज में अजीब सा गाम्भीर्य था जो किशोरावस्था के पायदान पर खड़ी लड़की के पिता के भीतर किसी अन्देशे की तरह गढ़े जा रहा था। अपनी जान में तो बिटिया का आचरण कम से कम संतोषजनक की ही श्रेणी में आता है लेकिन कहते हैं ना कि आजकल मां-बाप अपने बच्चों को जानते ही कितना हैं... क्या पता... किसी संगी साथी की सोहबत का असर... या अपने ही आवेग में कुछ... दफ्तरी वक्त में परिचित उधेड़बुन में धंसी मेरी मानसिकता यकायक सदमा खाकर मामले के 'अचानक स्वरूप' को जानने के लिए उद्विग्न होने से उठकर बेचैन हुए जा रहा थी किन्तु तुरंत स्कूल आने की ताकीद, कहना होगा हुक्म, ने उस पर रहस्यमयता का निर्मम लेप चढ़ा दिया था। महानगर के लिहाज से दफ्तर से स्कूल ज्यादा दूर नहीं है मगर वह सफर खासा लम्बा साबित हो रहा था और बेटियों के पिता इसके अभ्यस्त चाहे न हों, परिचित तो खूब होते हैं। अखबारों और चैनलों के जरिए दूसरों के साथ आए दिन होने वाले हादसे यकबयक प्रासंगिक होकर भड़भड़ाने लगे। पढ़ने में तो बिटिया वैसे भी प्रखर नहीं है, उस पर आज यह सब। 'क्या' का निर्वात लगातार भीतर किसी अनजान विकृति की शक्ल लिए जा रहा था। पूजा-पाठ न करने वाला व्यक्ति भी ऐसे मौकों पर दैवीय मदद की गुहार करने लगता है।

तमाम अंधेरे ख्यालों को कांख में दबोचे और दबे पांव मैंने किसी तरह उस सन्नाटे भरे बरामदे में प्रवेश किया जिसके आखिरी छोर पर **मिस मथायस** का कमरा था। उसी अनजान डर को संभाले उनके कमरे में प्रवेश के साथ मैंने बेटी के हवाले से अपना परिचय दिया। एक-दो फाइलों पर अपने दस्तखत घसीटने के बाद वे निरपेक्ष मुद्रा में पेशेवराना अदा से मुखातिब होकर बोलीं: 'मामला सीरियस तो है मगर इतना भी नहीं... फिर भी मैंने सोचा कि आपकी नजर में नहीं लाया गया तो बात बिगड़ सकती है' उनके शब्द बहुत राहत भरे लगे। इस दौर में किसी अप्रिय का न होना ही खुशी का कारक होता है। मेरी जान में जान आयी। 'क्या हुआ मैम, क्या किया इसने?' मैं जैसे किसी दुआ की तरह अभी-अभी प्रकट हुए अपने त्राता के साथ कदमताल करने को आतुर होने लगा।

'दो-तीन बातें हैं... आज जब यह स्कूल आयी तो केश खुले हुए थे। चुटिया नहीं बनाई थी। मैंने टोका तो कहने लगी कि केश गीले थे, पहली कक्षा से पहले बना लेगी'।

'इसने नहीं बनाई?'' मैंने कसूर पकड़ना चाहा।

'नहीं बना ली थी'।

''फिर?''

'आंखों में काजल लगा हुआ था'

आरोप से अधिक उनकी भंगिमा

संगीन थी। अभी तक मैं उन्हें अपने मुक्ति-दूत की तरह देख रहा था इसलिए हंस नहीं पा रहा था। कातर भाव से मैंने यही जोड़ा 'काजल तो मैम आंखों के लिए स्वास्थ्यवर्धक होता है ना... बल्कि इस पीढ़ी से शिकायत है कि काजल लगाने को वह दकियानूसी मानती है''।

'लेकिन मत भूलिए कि इसे मेक-अप की तरह भी लगाया जाता है जिसकी स्कूल में छूट नहीं है'। उन्होंने बतौर हस्तक्षेप स्वभावगत सख्ती से कहा।

एक रहस्यमय और अनजान डर के चंगुल से जरा मुक्त होते ही। तभी मैंने गौर किया कि उस स्थूलकाय श्यामला ने अपने मृगनयनों में जो ढेर सारी कालिख पोत रखी थी वह काजल लगाने की क्रिया के उदारवादी विस्तार से हरगिज आगे का कुछ था।

'लेकिन मैम दोनों में फ़र्क कैसे करते हैं?'

मैंने किसी अपराधी की तरह बचाव में रास्ता टटोलते हुए पूछा।

'अनुभव से... हमें सब पता चल जाता है'। उनके तेवर से पता नहीं कैसे मेरे भीतर 'आवाज भी एक जगह है' शीर्षक कौंध आया।

तब चूंकि चपरासी बिटिया को बुला लाया था इसलिए मामले में आगे जिरह की गुंजाइश नहीं रह गयी थी। अनायास ही मेरी आँखें इल्जामों की रोशनी में 'मुलजिम' को निहारने लगीं: हांफती हुई बच्ची बाकायदा चुटिया किए हुए थी। काजल भी ऐसा नहीं कि गौर करने लायक हो। उल्टे, इस तरह

अनायास ही मेरी आँखें इल्जामों की रोशनी में 'मुलजिम' को निहारने लगीं: हांफती हुई बच्ची बाकायदा चुटिया किए हुए थी। काजल भी ऐसा नहीं कि गौर करने लायक हो। उल्टे, इस तरह बिन बताए अभिभावक को स्कूल में देखे जाने के मंतव्य से हर बच्चे के भीतर जो डर व्याप्त होता है, वह उसकी लरजती मुद्रा और सन्न आँखों से साफ छलक रहा था।

बिन बताए अभिभावक को स्कूल में देखे जाने के मंतव्य से हर बच्चे के भीतर जो डर व्याप्त होता है, वह उसकी लरजती मुद्रा और सन्न आँखों से साफ छलक रहा था।

'लेकिन सबसे ज्यादा आपत्तिजनक बात जो इसने की, वो यह कि आधी छुट्टी में ग्राउंड में खेलते हुए इसने मुझे देखा था मगर इसके बाद भी 'सॉरी' कहने नहीं आयी'।

यानी वे वापस इल्जामात के दौर में घुस गईं।

हम पिता-पुत्री संयुक्त मगर स्वतंत्र रूप से, न किए गए उस संभावित अपराध की टोह लेने में लगे थे कि उन्होंने हमारी परेशानी का निवारण कर दिया: 'इसे कोई डर ही नहीं है... कि हम हैं... हम कुछ कर सकते हैं...'।

ज्ञान के मंदिर के बीचों-बीच उनकी बात ने एक तल्ख झनझनाहट के साथ पूरे शिक्षा-तंत्र का मानो बीज-सूत्र थमा दिया। ज्ञान, आचरण और विवेक जैसे तत्वों के लिए दीक्षित करने वाली यकीनन कई खूबियों से लैस हमारी शिक्षा पद्धित अपने शागिर्दों में 'डर' को प्रथमतः एक मूल्य की तरह अवस्थित देखना चाहती है। आप निन्यानवें प्रतिशत ले आएं या सौ में सौ, खिलाड़ी हों या 'राइटर' तौर-तरीके से तो रहना ही होगा... और तौर-तरीके माने वह जो हम तय करते हैं। अपनी रौ में वे बहुत कुछ समझाने निकल पड़ी थीं कि समाज के बिगाड़ में इन छोटी-छोटी बातों की क्या अहमियत है। उस सब पर ध्यान देने का अर्थ होता उनसे असामयिक मुठभेड़ करना।

'अभी यह सब करेगी तो आगे कॉलिज में करने को क्या बचेगा?' कहकर उन्होंने मामले का हिदायतन पटाक्षेप किया, जिसके बाद हम बाप-बेटी उनका शुक्रिया और आइन्दा इस तरफ सचेत रहने का वायदा करके रुखसत तो कर गये मगर 'पूरे पागलपन' पर मुस्कुराए बगैर नहीं रह सके। मुझे लगा, हमारी पीढ़ी अगर आने वाली पीढ़ी के साथ अपेक्षित संवाद या सामंजस्य नहीं कर पा रही है तो सारा कसूर 'उनका' नहीं है।

अलबत्ता, मेरा डर यह भी है कि एक मूल्य के बतौर लाख बेमेल होते हुए भी यह 'डर' किसी एक संस्था, दल या प्रभाग तक नहीं सिमटा है! ❑

Omasharma40gmail.com
मो.-९८२०६८८६१०

फीचर विशेष

आद्या के बहाने अपने के लिए...

❑

दीपिका घिल्डियाल

मेरा नाम दीपिका घिल्डियाल है। मैं देहरादून में रहती हूं और एक निजी विश्वविद्यालय में काम करती हूं। मेरी छह साल की बहुत प्यारी बेटी है जिसका नाम आद्या है। आद्या एक स्पैशल चाइल्ड है, उसे सेरेब्रल पाल्सी है। मैं लिखती हूं ताकि ये दुनिया खास लोगों के लिए थोड़ी और संवेदनशील बन सके। लोग दया और संवेदनशीलता का फर्क समझ सकें और बेहतर इन्सान बन सकें। ❑

प्यारी आद्या

रात के इस वक़्त जब तुम पेट के बल लेटी हुई अपने पैरों को नचाते हुए जाने किस बात पर हंसे जा रही हो ,मैं तुमसे कुछ कहना चाहती हूं। मैं चाहती हू तुम्हें अभी रोकूं और तुम्हें वो सब बताऊं लेकिन तुम्हारी हंसी के बीच अपनी भावनाओं की नमी नहीं बिखेरना चाहती। मैं चाहती हूं तुम इस पल को भरपूर जिओ और थक कर सुकून भरी नींद के आगोश में चली जाओ।

अभी दो दिन पहले जब मेरी ऑफिस बस छूट गई तो मैं एक ऐसे स्टॉप पर खड़ी थी जो एक स्कूल के ठीक बाहर है। छोटे छोटे बच्चे, कुछ तुम्हारी उम्र के कुछ तुमसे भी छोटे अपने मम्मी या पापा की उंगलियां थामे अंदर जा रहे थे। उनके चेहरों पर ख़ुशी और शरारतें थीं,वो उछलते कूदते चल रहे थे। मुझे उन सबमें तुम दिखाई दीं।

अचानक मेरी आंखों से आंसू बहने लगे। मैंने खुद को बहुत बेबस महसूस किया। एक व्यस्त सड़क पर खड़े होकर यूं रोना कितना बेवकूफाना था।

मैं रोई क्योंकि मैं तुम्हें उस जगह देखना चाहती थी। तुम्हें पढ़ते हुए, खेलते हुए और शरारतें करते देखना चाहती थी, मैं रोई क्योंकि तुम्हारे हिस्से में यह सब नहीं आ पाया, मैं भी नहीं ला पायी।

तुम मुझे माफ़ तो करोगी न? तुम जानती हो मैंने कभी किसी से तुम्हारी तुलना नहीं की। कभी तुम्हें किसी से कमतर नहीं माना है। ये जो उस सुबह मेरी आंखों से बहा वो इसलिए नहीं था कि तुम्हें लेकर मुझे कोई पछतावा या शिकायत है। तुम्हारी मां एक आम मां है, तुम्हें लेकर बहुत सारे ख्वाब देखती, मजबूत दिखने का दावा करती, एक आम मां।

घर लौटकर तुम्हें देखते हुए मैंने सुबह की अपनी कमज़ोरी को समझने की कोशिश की। तुम्हारे चमकते चेहरे ने मुझसे तुम्हारी

खुशदिली की चुगली की। जो नहीं हो सकता उसके लिए रोने के बजाय तुम जो है उसी को कितना शानदार बना रही हो। तुम बोलती नहीं लेकिन अगर तुम बेवक़्त सो जाओ तो घर में सन्नाटे छा जाते हैं। तुम चलती नहीं लेकिन तुम्हारी ही आहट हर तरफ सुनाई देती है। तुम हर हाल में अपनी जिद मनवा लेती हो और किसकी मज़ाल जो तुम्हारे हिस्से की तवज्जोह किसी और को मिले।

अपनी मां की कमजोरियों को खुद पर कभी हावी मत होने देना। उन खांचों में फ़िट होने की कोशिश भी मत करना जिन्हें ये दुनिया नार्मल कहती है। स्कूल गई तो ठीक नहीं तो तुम्हारे चारों ओर फैली प्रकृति और लोगों को पढ़ना। चल पाई तो बेहतर वरना कल्पना का असीम आकाश तुम्हारी प्रतीक्षा में है। बोल सकी तो अपना मन बोलना नहीं तो कई और रास्ते हैं अपना वजूद जताने के।

तुम्हारी मां कई बार यूं ही रो पड़ेगी, हो सके तो उसे भी अपना थोड़ा सा हौसला देना और उसकी एक बात भी समझना कि रोना बुरा नहीं होता, कुछ देर भर का हो तो बिलकुल भी बुरा नहीं होता।

मेरी आद्या

प्यार और सिर्फ प्यार।

मैंने अपने जीवन के जो भी फैसले आज तक लिए, उनमें सबसे कामयाब रहा तुम्हारा नाम चुनने का फैसला, जिसे मैंने तुम्हारे जन्म से बहुत पहले चुन लिया था। मैं हमेशा से शब्दों की ताकत में यकीन करती हूं, मैं जानती थी कि जो भी तुम्हारा नाम होगा, तुम्हारे व्यक्तित्व में झलकेगा। तुम्हारा नाम चुनने के लिए मुझे ना किसी से पूछना पड़ा, ना कहीं तलाशना पड़ा। एक सुबह तुम्हारे दादाजी को दुर्गा सप्तशती पढ़कर सुनाते हुए आद्या पढ़ते ही मुझे लगा कि यही तुम्हारा नाम होगा, बस यही।

तुम सच में आद्या हो, शक्ति हो। तुम जब रात को गहरी नींद में होती हो, मैं तुम्हारे शांत, स्निग्ध चेहरे को देखती हूं। तुम्हारी आंखे, जीवन के रस से सराबोर, तुम्हारे हाथ, अपनी सीमाओं को ललकारते हुए, तुम्हारे कभी ना थकते पैर और तुम्हारी मुस्कान, जिसने कभी क्षीण होना नहीं सीखा। मैं तुम्हें देखती हूं आद्या और सोचती हूं कि इस शक्ति की मां होने के लिए मैं ईश्वर का जितना आभार मानूं, कम है।

शेष पृष्ठ १८ पर जारी➔

निलेश काथड़ की कविताएं

छुआछूत याने क्या

मैंने मोर से पूछा : छुआछूत याने क्या ?
मोर तो थिरक-थिरककर नाचने लगा
और मेरे गाल पर मीठा चुंबन लेकर पीहू-पीहू करने लगा !

मैंने वृक्ष से पूछा : छुआछूत याने क्या ?
उसने तो अपनी शाखाएं नीचे झुकाकर मुझे गोद में ही बिठा लिया!

मैंने फूल से पूछा : छुआछूत याने क्या ?
वह तो खुशबू बिखेरते हुए मेरी नाक के साथ खेलने लगा !

मैंने नदी से पूछा : छुआछूत याने क्या ?
नदी तो मेरे पैरों को छूकर
ठेठ हृदय तक मुझे भिगो गई!

मैंने पत्थरदिल पहाड़ से पूछा : छुआछूत याने क्या ?
पहाड़ तो पिघलकर रेला बन बहने लगा मेरे पीछे-पीछे
मुझे छूने-स्पर्श करने के लिए ही तो !

मैंने आदमीसे पूछा : छुआछूत याने क्या ?
उसने मेरे सामने देखा
दूर खिसका
और चलने दिया !

कल

कल जागोगे तो
बहुत देर हो चुकी होगी
उन्होंने सूरज को भी बेच दिया होगा
और धूप देने लगेंगे राशन कार्ड में।

वे इस तरह पी चुके होंगे सबकुछ
कि, नदियां तड़पती होंगी जल के बिना
और वृक्षों की हरित हंसी
टूटकर पड़ी होगी किसी टाल में।

फिर
सूखे सट्ट पतझड़ की डाल से
पक्षी की एकाध कूक
चटककर चट-चट टूट जाएगी।

हां, तुम्हारे द्वारा पाली-पोसी
आनेवाले कल के सुख की उम्मीद
टुकड़े-टुकड़े हो कर पड़ी होगी कहीं
सूनी आंख के सूने आकाश में।

कल जाओगे तो
उधार की सांसों से खिली सुबह
तुम्हारे दरवाजे पर खड़ी होगी
पर कल जागोगे तो
बहुत देर हो चुकी होगी। ❑

-अनुवादक मालिनी गौतम
५७४, मंगल ज्योति सोसायटी,संतरामपुर-३८९२६०,
जिला-महीसागर (गुजरात); मो. ०९४२७०७८७११

केशव शरण

घनेरा है अंधेरा बन विकट है
भटकता मन अकेलापन विकट है

निरंतर चक्रव्यूहों की चुनौती
निहत्थे हम हमारा रन विकट है

कभी देखा नहीं इस रंग में था
लहू के रंग में ये घन विकट है

चढ़ा छाती फुंकारे जा रहा है
भयानक नाग का यह फन विकट है

कमाने में बचाने में लगे थे हम
हमें ही खा गया ये धन विकट है

गवाया जा रहा है आज जबरन
वतन का गीत जन-गण-मन विकट है

विकट है रूह मंडराती हुई इक
न हिलता और डुलता तन विकट है ❑

वही अच्छा जिसे चाहत नहीं है
हमीं को देखो राहत नहीं है

कहां किस मोड़ पर बिछुड़ें सनम हम
यहां इससे बड़ी आफत नहीं है

बुरा मासूमियत के कत्ल से भी
अगर संवेदना आहत नहीं है

तुम्हारे गांव में मेरे नगर में
कहां बोलो महाभारत नहीं है

भला इंसान होना भी बुरा है
अगर पैसा अगर ताकत नहीं है

मरेगा इश्क फिर तो भुखमरी से
कभी जो हुस्न की दावत नहीं है

हमें भी लोग क्यों कुछ मान बख्शें
हमारी शायरी दौलत नहीं है ❑

- एस. 2/564, सिकरौल,
वाराणसी-221002

ये कविताएं अलाव के सौजन्य से
अलाव के संपादक रामकुमार कृषक हैं।

शेष पृष्ठ १५ से जारी...

मैं सेरिब्रल पाल्सी के बारे में पढ़ती हूं, फिर तुम्हारी तरफ देखती हूं और हंसती हूं। **तुमने सेरिब्रल पाल्सी को कितना असहाय बना दिया है। तुमने सारी परिभाषाएं उलट दी हैं। कितनी छोटी सी हो लेकिन तुमने जीवन को कितना बड़ा बना लिया है।**

तुमने पिछले साढ़े पांच साल में मुझे हमेशा चौंकाया है। अब दो दिन पुरानी ही बात देखो। दो दिन के लगातार सफर के बाद मैं और तुम्हारे पिता निढाल थे और तुम? घर पहुंचते ही दादी को देखकर किलकारियां मारती, कूदती रही। तुमने पिछले दो दिन की सारी कसर निकाली, पूरा खेली तब जाकर सोई। हमारी थकन अभी तक नहीं उतरी और तुम एकदम ताज़ा, खुश,खेलने का कोई मौका नहीं छोड़ती हुई।

अब तुम कहोगी कि इसमें क्या बड़ी बात है,सब बच्चे ऐसा ही करते हैं। मैं जानती हूं और इसीलिए ये बात मुझे भिगो देती है कि तुम भी वही सब कर रही हो। तुम कहीं से कम नहीं हो, अलग नहीं हो,बस अलग तरीके से सब करती हो।

मैं तुम्हारे लिए डरती हूं, परेशां होती हूं, मां हूं ना इसलिए। तुम कभी परेशां नहीं होती, कभी नहीं डरती। इसकी एक वजह ये भी है कि तुमने खुद को लेकर कोई सीमा नहीं बांधी। किताबों ने तुम्हारे मन में डर नहीं भरे, इंटरनेट ने तुम्हें जानकारियों के साथ आशंकाएं नहीं बांटी। तुम वो हो जो खुद को जानती हो, खुद को जीती हो। तुम जीवन हो, आद्या हो।

प्यार और सिर्फ प्यार

तुम्हारी मां।

मेरी प्यारी बेटी,

ये खत मैं तुम्हारे लिए लिख रही हूं,लेकिन तुमसे ज्यादा, ये मेरे लिए है। कुछ दिन पहले, किसी किताब में पढ़ा था कि वो सारे खत जो हम किसी और के लिए लिखते हैं, दरअसल हम खुद के लिए ही लिख रहे होते हैं।

तुमसे मेरा रिश्ता, मेरे जीवन का सबसे खूबसूरत रिश्ता है, सिर्फ इसलिए नहीं कि मैंने तुम्हे जन्म दिया, इसलिए भी कि तुमने मुझे

जीवन के बहुत सारे अनदेखे रंग दिखाए, आंसुओ और मुस्कानों के मेल से बने हुए रंग। शुक्रिया।

तुम्हारे पैदा होने से पहले, काफी पहले से, मैं तुम्हारे बारे में सोचती थी। तुम्हारी शक्ल, तुम्हारी बोली, तुम्हारी शैतानियों की कल्पना करती थी। मुझे हमेशा से यकीन था कि तुम सबसे अलग होगी, तुम ने मुझे निराश नहीं किया। तुम्हारा जन्म, मेरे जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटना थी, मैंने जाना कि मैं किस सीमा तक साहसी हूं, मुझे खुद से मिलवाने के लिए तुम्हारा शुक्रिया। मुझे हमेशा एक बात का अफ़सोस रहेगा कि इस दुनिया में तुम्हारा स्वागत उस तरह से नहीं हो पाया, जैसे होना चाहिए था लेकिन तुम जानती हो, तुम्हे महफूज रखना,उस वक़्त और हर वक़्त, हमारे लिए सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण था, और रहेगा।

तुमने अपने जीवन के पहले दिन से, बहुत कष्ट झेले हैं लेकिन हर मुश्किल भरे दिन ने, साबित किया है कि तुम वाकई आद्या हो, शक्ति हो। **तुमने अपनी शक्ति का थोड़ा सा ही सही, जो अंश मुझमें भर दिया है, उसके लिए भी शुक्रिया।**

मुझे तुम्हारी फ़िक्र होती है, डर भी लगता है, लेकिन जब भी तुम्हे देखती हूं, एक विश्वास सा उपजता है, विश्वास जो एक मां का सबसे बड़ा हथियार है, सबसे बड़ा सहारा भी। तुम्हारे बारे में कौन क्या कहता है, डॉक्टर या लोग, तुम्हारी मां उसमे से सिर्फ उम्मीद को सुनती है, बाकी सब सुनने के लिए मेरे कान काम नहीं करते, मैं जानती हूं, तुम भी ऐसा ही करती हो। मुझे गुस्सा नहीं आता लेकिन अच्छा भी नहीं लगता जब कोई तुम पर दया दिखाता है। आखिर क्यो?? सिर्फ इसलिए कि तुम दूसरों से अलग हो?? तो क्या फ़र्क़ पड़ता है, इस दुनिया में हर कोई एक दूसरे से अलग होता है, होना भी चाहिए, वर्ना ये दुनिया इतनी सुन्दर कैसे बन पाती। और तुम? तुम तो बेहद खास हो, ऐसा मैं नहीं, जिसने भी तुम्हे मुस्कराते हुए देखा है, यही कहता है।

तुम इस दुनिया को थोड़ा और सुन्दर बनाओगी, किसी के होठों पर हंसी लेकर आओगी, तुम कभी किसी का दिल, जान बूझकर नहीं दुःखाओगी, अपने हिस्से का, जितना हो सकेगा, भरपूर जियोगी, मैं भी यही करने आई थी, तुम भी यही करोगी।

मेरी प्यारी बेटी, तुम्हारी मां, हमेशा तुम्हारे लिए, तुम्हारे साथ है, मां, दोस्त और शिक्षक के रूप में, जरुरत पड़ने पर तुम्हारी आवाज,

तुम्हारी ढाल बनकर भी। तो तुम जियो, हंसो, उस प्यार को भरपूर महसूस करो जो हर वक्त तुम्हे मिलता है, मिलता रहेगा। मुझे गर्व है तुम पर, तुम्हारी मां होने पर भी।

खूब प्यार के साथ, तुम्हारी मां।

नन्ही आद्या

साल २०१३ की गर्मियां थी, आठ महीने की आद्या को लिए हम दिल्ली के मालवीय नगर में जूतों की दुकान तलाश रहे थे। उसी सुबह उसके ए.एफ.ओ. बनकर आये थे और अब हमें उनके ऊपर पहनाने के लिए सेंडिल की तलाश थी।

ए.एफ.ओ. खास डिजाइन के प्लास्टर ऑफ़ पेरिस जैसे मैटीरियल से बने जूते होते हैं जो पैरों को सही शेप और सपोर्ट देने के लिए इस्तेमाल होते हैं। नाज़ुक पैरों में इतने सख्त जूते पहनाते कलेजा मुंह को आता था लेकिन जरुरी था तो पहनाते थे।

उस शाम जो सेंडिल खरीदी वो हमेशा नई रही। उसके तले एकदम साफ़ रहे। आद्या का पैर बढ़ा और दूसरी सेंडिल आ गई।

मैं जब भी उसके जूते देखती, मेरा मन बहुत खराब होता। मैं उसके जूतों को बाकी बच्चों की तरह मिटटी में सना हुआ देखना चाहती, फटते हुए देखना चाहती। मॉल या बाजार में जूतों की दुकान जाना होता तो बच्चों के सेक्शन से कतराने लगती।

वक़्त के साथ मैंने खुद को समझाना शुरू कर दिया था। स्वीकार करना भी कि तमाम कोशिशों के बाद भी अगर वो ना चल सकी तो कोई बात नहीं। मैं ऐसे तमाम लोगों के उदाहरण खुद को देती जो कभी नहीं चले लेकिन उनकी कहानियां पीढ़ी दर पीढ़ी चलती जा रही हैं।

फिर किसी रोज़ आद्या ने उछलना शुरू किया। हम पीछे से सहारा देते और वो उछलती। उसे बहुत मज़ा आता, हमें भी।

ऐसे ही किसी दिन उसने कदम बढ़ाने शुरू किए। ये बड़ी उपलब्धि थी हालांकि पीछे से पूरा सहारा रहता है लेकिन उसके दिमाग से पैरों तक सही सन्देश पहुंचना ही बड़ी बात है। इस बात को शुरू हुए कोई एक साल हुआ।

मैं आद्या पर अपनी किसी चाहत का दबाव नहीं डालूंगी। मैं अब उस मानसिक अवस्था में हूं जब इसकी छोटी से उपलब्धि भी मुझे ख़ुशी

से भर देती है लेकिन जिन दिनों वो कुछ नया ना भी करे, मैं मुतमईन रहती हूं। मेरे लिए उसका खुश और स्वस्थ होना ही सबसे बड़ा सुकून का सबब है।

इन दिनों आद्या अपनी नई सेंडिल के साथ घर के अंदर खूब चल रही है। बेशक पीछे से पूरा सहारा होता है और ये भी कि हर वक़्त कदम नहीं बढाती,कभी कभी उछल उछल कर ही दूरी तय कर जाती है।

एक और बात,अब आद्या के जूतों के साफ़ तले मुझे दुखी नहीं करते,मैं ऐसे ही चेक करती हूं कि घर कितना साफ़ है। :)

आद्या

पिछली रात से लगातार हो रही बारिश ने जंगल के इस हिस्से को और भी रहस्यमयी बना दिया था। इसे जंगल कहना मेरे लिए गलत होगा, ये वो जगह थी जहां बचपन और किशोरावस्था में घर के आंगन की तरह खेले थे लेकिन आज ये जगह बहुत ही डरावनी लग रही थी। युवा तांत्रिक अजीबोगरीब हरकतें करता हुआ कुछ मंत्र जैसा बोल रहा था। ये वो लड़का था जिसे बहुत छोटे से मैंने देखा था। जिसने स्कूल में कई बार मेरा उदाहरण सुना होगा। आज उसके आगे मैं अपराधी की तरह बैठी थी और वो मुझे अपराधमुक्त करने के लिए अनुष्ठान कर रहा था। मेरा अपराध ये था कि मैंने एक स्पेशल बच्चे को जन्म दिया था।

मैंने इससे ज्यादा अपमानित कभी महसूस नहीं किया था।

इस घटना से बहुत पहले से मेरे अपने और पराये लोग कभी संवेदना, कभी सुहानुभूति तो कभी सहायता के रूप में ऐसा कुछ जताते थे जो मुझे आत्मग्लानि के अंधेरे कुएं में धकेलता जा रहा था। मैं आद्या के लिए बेहतरी की संभावनाएं तलाश करते हुए अपने आप से भी जूझ रही थी। किसी भी तरह के अंधविश्वास में यकीन ना रखने वाली मैं एकदम खामोश रहते हुए अपना विरोध जता रही थी लेकिन इतने सारे दबाव नहीं झेल पाई और हार मान कर अपने ऊपर किसी तथाकथित बुरी शक्ति का प्रभाव होना मान गई।

इस घटना के बाद मैं टूट चुकी थी। अगले लगभग छह महीने गहरे अवसाद में बीते। मैं सोती हुयी आद्या के सिरहाने बैठ कर आंसू बहाती, जाने कितनी बार उसे सॉरी बोलती। प्रेगनेंसी के दिन याद करती और

सोचती कि कहां मैंने कमी कर दी। मेरे पास कोई नहीं था जिसे में अपना दर्द सुनाती, जिसे देखकर मुझे ये लगता कि कम से कम इसकी नजरों में मैं गुनहगार नहीं।

मैं शायद कभी इससे उबर ना पाती अगर मुझे उ्रुप गेहप थेशहश्र ना मिलती। डॉन मुझे एक ऑनलाइन पत्रिका के जरिये मिली। लगभग मेरी मां की उम्र की, बेहद संवेदनशील और साहसी महिला। चार बच्चों की मां, जिनका एक बच्चा डैनी उर्फ़ बू स्पेशल चाइल्ड है। डॉन ने ना सिर्फ मुझे संभाला बल्कि मेरे अंदर का खोया आत्मविश्वास भी लौटाया। हम घंटों चैट करते,एक दूसरे की भावनाएं और डर साझा करते,वो मुझे अपनी जिंदगी की कहानी सुनाती और मैं हैरान होती कि इतनी दुश्वारियों में भी कोई इतना खुश कैसे रह सकता है।

आज मुझे खुद को लेकर कोई आत्मग्लानि नहीं, आद्या को लेकर कोई पछतावा नहीं। मैं इतनी ही गर्वान्वित मां हूं जितनी कोई भी मां हो सकती है या शायद उससे कहीं ज्यादा,ये सब डॉन की वजह से हुआ। आद्या और मेरी कहानी में डॉन एक चमकता सितारा है जो मुझे हमेशा रौशनी से भर देता है। वो उस समाज से आती है जिसे हम असंवेदनशील मानते हैं,जहां परिवार की अवधारणा बहुत कमज़ोर है, जहां लोग किसी की परवाह नहीं करते।

हम समाज को दोष देते हैं और ये नहीं सोचते कि समाज को बनाता कौन है? क्या आप और मैं किसी को सलाह देते हुए इतना ध्यान रखते हैं कि सामने वाले को हमारी सलाह की जरुरत है भी या नहीं? हमारी आवाज की टोन कैसी है?

ऐसा नहीं है कि अब सब बदल गया है। अब भी तमाम लोग, जिनमें कुछ बहुत अज़ीज़ भी हैं, मुझे तमाम तरह की सलाहें देते हैं। जिनमें पूजा-पाठ से लेकर झाड़ फूंक भी शामिल होता है लेकिन अफ़सोस कि कोई भी किसी थेरेपिस्ट के बारे में नहीं बताता, किसी अच्छे डॉक्टर का पता नहीं बताता। कोई ये नहीं कहता कि एक दिन तुम आराम करो हम आद्या की देखभाल कर लेंगे। अब जो बदला है वो मैं हूं। मैंने किसी भी तरह की बकवास के लिए कान बंद कर दिए हैं। मैं सिर्फ सकारात्मकता सुनती हूं, उम्मीद सुनती हूं, भरोसा सुनती हूं।

मैं आद्या की मां ही नहीं, वकील भी हूं। उस तक किसी तरह का अपमान या दया नहीं पहुंचने देती। मैं उसकी आवाज हूं। हम बहुत अच्छी बातें करते हैं, बशर्ते आपके पास भी कुछ अच्छा हो, सुनाने के लिए। ❑

–देहरादून, उत्तराखंड; मोबाईल – ९४१२९९८३७४

दृढ़ संकल्प व करुणा की पर्याय

शिप्रा शर्मा

❑

डॉ. कन्हैयालाल राजपुरोहित

जोधपुर में जन्मी शिप्रा ने उच्च शिक्षा पायी थी। तेजस्वी व दृढ़ संकल्प की धनी शिप्रा के मन में जन्म से ही कुछ कर दिखाने का जज्बा था। दूसरों के दर्द की तड़प को वे महसूस करती थीं। उन्होंने आगा खां फाउन्डेशन के अलावा कई संस्थाओं में अपना योगदान दिया। लेकिन इतने सब योगदान से उनका अर्न्तमन नहीं माना। नई चुनौतियों से जूझने में ही अपने जीवन की सार्थकता समझी और वह काबुल में विपदा और त्रासदी से अभिशप्त लोगों के बीच पहुंच गयी। जहां तालिबानी आतंकियों द्वारा की गयी अतिविनाशकारी ट्रक बमबारी में काबुल स्थित 'ग्रीन वैली' क्षेत्र में शहीद हो गयीं। इस आलेख को पढ़ कर पाठक राजस्थान की 'मलाला' शिप्रा के नि:स्वार्थ त्याग और सेवा को जान सकेंगे। सं. ❑

मानव सेवा को प्रभु सेवा उद्‍घोषित कर स्वामी विवेकानंद ने अन्तहीन दु:ख रजनी से घिरे लोगों को संबल व राहत प्रदान करने के उदात्त भाव से प्रेरित पुण्यात्माओं के लिये उस पथ की ओर इंगित किया था, जिसकी पथिक बनकर सूर्य नगर जोधपुर की दुहिता शिप्रा शर्मा ने अपना जीवन सार्थक कर लिया। हतश्री मानवता की सेवा के लिये पिछले बारह वर्षो से अनवरत चल रही उसकी तप: पूत साधना, जिसकी परिणति सक्रांति पर्व पर काबुल में उसकी शहादत में हुई इस तथ्य का जीवन्त प्रमाण है कि –

कुछ उसूलों का नशा था कुछ मुकद्दस ख्वाब थे
हर दौर में शहादत के यही असबाब थे।

उच्च शिक्षित, प्रतिभा संपन्न शिप्रा में प्रारंभ से ही सामान्य जीवन यापन से कुछ अलग कर दिखाने का जज्बा था। इसी कारण दुनियावी मानकों के अनुसार सम्मुख विद्यमान विपुल संभावनाओं की अनदेखी करके उसने निजी सुख–दुख के आकलन से ऊपर उठकर राष्ट्रीय व अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न सेवा प्रकल्पों की क्रियान्विति में पूरी निष्ठा से स्वयं को समर्पित कर दिया। अत्यन्त दुर्लभ इसी सेवाभाव से प्रेरित होकर वह आतंकवाद की विभीषिका से त्रस्त अफगानी लोगों के पुनर्वास में हाथ बंटाने काबुल पहुंच गई। उसका सेवाभाव इतना सशक्त था कि उसके मासूम बेटे की ममता भी उसे संकटग्रस्त क्षेत्र में जाने से नहीं रोक पायी। उसके मनोजगत का ताना–बाना तो यही भाव था कि

अपना दर्देदिल समझने की
फुर्सत यहां किसे
हम तो औरों को तड़पना देखकर
तड़पा किये।

जिन गैर सरकारी संगठना के माध्यम से उसने सेवाएं दीं, उनमें रिजवान अदातिया फाऊंडेशन, मुंबई, आगा खां फाऊंडेशन जिनेवा, देव कल्पना टेक्नोलॉजी प्रा.लि. मुंबई, हल

भागीरथी फाऊंडेशन जोधपुर, आई आर एफ टी मुंबई आदि उल्लेखनीय हैं। अफगानिस्तान में स्थित यूएसएआईडी संगठन ने उसके अप्रतिम बलिदान के बारे में कहा है, 'हम सिविल सोसायटी की लोकतांत्रित भागीदारी एवं जवाबदेह शासन प्रणाली को सशक्त बनाने के प्रति शिप्रा शर्मा के समर्पण भाव को नमन करते हैं।'

आगा खां फाऊंडेशन जैसे विश्वविश्रुत सेवा संगठन ने शिप्रा की कार्यदक्षता, समर्पण भाव व अन्यान्य वरेण्य गुणों के संदर्भ में अपना प्रशंसा भाव व्यक्त करते हुए लिखा है 'उसने स्वयं को आत्मविश्वास से भरपूर एवं सक्षम होना प्रमाणित कर दिया। लचीलेचपन व समानुभूति जैसी विशेषताओं ने उसे विशिष्ट बना दिया था। वह अन्तर्दृष्टि से संपन्न शख्सियत थी, जो सदैव व्यस्त, विनीत और सबकी मददगार थी। नि:स्वार्थ मानव सेवा के लिये समर्पित उसका जीवन वंदनीय है।'

अफगानिस्तान जाने के उसके इरादे में निहित भयावह खतरों को देखते हुए सभी इष्टजनों की आशंकाओं को दरकिनार करने वाली इस निर्भीक बाला के अपनी मां और मामा को कहे गये ये शब्द तो उसकी दिलेरी का मुंह बोलता प्रमाण है- **'मौत से क्या डरना, वह तो कहीं भी आ सकती है।'**

खतरों से अप्रतिहत रहने की उसकी साहसिकता को लेकर आगा खां फाऊंडेशन ने उसके अन्तर्मन एक झांकी इस तरह प्रस्तुत की है-'जब हमें ज्ञात हुआ कि वह अफगानिस्तान चली गई है, तब हम समझ गया कि वह कितनी दिलेर है और विपदाग्रस्त लोगों की मदद करने के लिये अपनी प्रतिभा, कौशल और भावप्रवणता का नियोजन करने हेतु किस सीमा तक जा सकती है।'

डॉ. कन्हैयालाल राजपुरोहित

शिप्रा द्वारा की गई अफगानी लोगों की नि:स्वार्थ सेवा सदैव लोगों के हृदय पटल पर अंकित रहेगी। काबुल की एक संस्था 'तदबीर कसंलटिंग' के मुख्य कार्यकारी अधिकारी श्री एहसान जिया ने शिप्रा के इस मनोभाव को रेखांकित करते हुए लिखा, 'वह परिष्कृत व्यक्तित्व व प्रतिभा संपन्न मस्तिष्क की स्वामिनी थी, जिसने पूरी ईमानदारी से अफगानिस्तान की सेवा की।' अफगानिस्तान टाईम्स ने उस काबुल में एक भारतीय नायक का अभिधान प्रदान कर उसके मिशन की महत्ता को उजागर किया है।

अफगानिस्तान जाने के उसके इरादे में निहित भयावह खतरों को देखते हुए सभी इष्टजनों की आशंकाओं को दरकिनार करने वाली इस निर्भीक बाला के अपनी मां और मामा को कहे गये ये शब्द तो उसकी दिलेरी का मुंह बोलता प्रमाण है- 'मौत से क्या डरना, वह तो कहीं भी आ सकती है।'

उसके कार्यक्षेत्र की व्यापकता इस तथ्य से स्वयंसिद्ध है कि वह अन्तरराष्ट्रीय फलक पर विकास कार्यो से सम्बद्ध आधा दर्जन से अधिक संगठनों में सतत रूप से सक्रिय रही। अपने एकनिष्ठ सेवा कार्यो के दरम्यान उसने अभिनव दिशा की ओर उन्मुख एक के बाद एक परियोजनाओं की न केवल परिकल्पना की अपितु सराहनीय दूरदर्शिता से उनका सही-सही क्रियान्वयन भी किया। जिन सेवा प्रकल्पों को उसने गतिशील बनाया, उनमें झारखंड से निष्क्रिय हो चुके कुष्ठरोग चिकित्सालय का पुनरुद्धार उल्लेखनीय है।

शिप्रा तेजी से एक नेत्री के रूप में उभर रही थी। समाज सेवा के किसी भी क्षेत्र से जुड़े प्रत्येक युवा कार्यकर्ता के लिए वह प्रेरणास्रोत एवं अनुकरणीय आदर्श है। किसी भी क्षेत्र में यथास्थिति उसके लिए असह्य थी। कार्य क्षेत्र की चुनौतियां उसके लिए अक्षय ऊर्जा व सतत परिश्रमशीलता की स्रोत थीं। चुनौतियों के अभाव से उत्पन्न एकरसता उसके लिए ऊब व थकावट का सबब थी। विकास के क्षेत्र में उसे नई चुनौती का इंतजार

रहता था। उससे जूझना उसके लिये जीवन की सार्थकता का पर्याय था। उसका अन्तर्मन तो सदैव इस भाव से तरंगित रहता था–

मैं तू.फां. का खूगर हूं
ले चल मझधार मुझे
डरा सकती नहीं डूबे
हुओं की दास्तां मुझे

अफगानिस्तान में एक गुरुतर व कठिन उत्तरदायित्व स्वीकार करने के लिये वह आगे आई और अपनी पिछली उपलब्धियों एवं योग्यता के दम पर उस पद के लिये अपनी उपयुक्तता चयनकर्ताओं के समक्ष भलीभांति सिद्ध कर दी फलत: आतंकवाद के फलस्वरूप सर्वथा दीन–हीन हो चुके अफगानी लोगों के पुनर्वास के महत् कार्यक्रम के निदेशक का दायित्व उसे सौंपा गया। इस पद की प्राप्ति के लिये इच्छुक अन्य अनेक अन्तरराष्ट्रीय अभ्यर्थी उसके भामंडल के सम्मुख निस्तेज हो गये।

किसी भी विचार–विमर्श व सामान्य बातचीत में भी उपस्थित लोगों में से कोई भी शख्स सम्बद्ध मुद्दे के उसके तलस्पर्शी विवेचन व गहन चिन्तन से मुतासिर हुए बिना नहीं रह सकता था। अन्तरराष्ट्रीय विकास के क्षेत्र में अत्यधिक व्ययसाध्य व श्रमसाध्य योजनाओं के क्रियान्वयन की दृष्टि से उसका नेतृत्व लासानी था। विकास के क्षेत्र में अन्तरराष्ट्रीय आयाम वाले कार्यक्रमों में उसने उच्चतम सोपान पर अपनी सेवाएं देकर अपनी योग्यता की अमिट छाप छोड़ी।

अपनी उम्र के लिहाज से वह एक दुर्लभ प्रतिभा थी। अफगानिस्तान में उसकी नई जिम्मेदारी चुनौतियों से भरपूर थी। काबुल में मात्र तीन महीने की कार्यावधि में अपनी सृजनशीलता व नई सोच के चलते उसने अत्यधिक लोकप्रियता की ऊंचाईयों को छू लिया था। वह उस कार्यशैली की प्रतीक बन चुकी थी, जिसके माध्यम से किसी समुदाय व संस्कृति की विशिष्ट प्रवृत्ति, मनोभावों व उच्च स्तरीय सिद्धान्तों को प्रकटत: असाध्य समस्याओं से त्रस्त अफगानी समाज को राहत पहुंचाने के लिये प्रयुक्त किया जा सकता था।

अपनी उम्र के लिहाज से वह एक दुर्लभ प्रतिभा थी। अफगानिस्तान में उसकी नई जिम्मेदारी चुनौतियों से भरपूर थी। काबुल में मात्र तीन महीने की कार्यावधि में अपनी सृजनशीलता व नई सोच के चलते उसने अत्यधिक लोकप्रियता की ऊंचाईयों को छू लिया था। वह उस कार्यशैली की प्रतीक बन चुकी थी, जिसके माध्यम से किसी समुदाय व संस्कृति की विशिष्ट प्रवृत्ति, मनोभावों व उच्च स्तरीय सिद्धान्तों को प्रकटत: असाध्य समस्याओं से त्रस्त अफगानी समाज को राहत पहुंचाने के लिये प्रयुक्त किया जा सकता था।

उसका दृढ़ विश्वास था कि जीवन को जीने योग्य बनाने हेतु विकास के क्षेत्र में कार्यरत व्यक्तियों के लिये न तो **धर्म** और न ही **देशों की सीमाएं** होती है। उन्हें तो विपदाग्रस्त व संघर्ष में फंसे क्षेत्रों को प्राथमिकता देनी चाहिये। अपने चुने हुए कार्य क्षेत्र में वह सर्वोत्तम दौर से गुजर रही थी। काबुल में विपदा से अभिशप्त लोगों की सेवा में निरत पुण्यात्माओं में भय का संचार कर उन्हें अपने उदात्त लक्ष्य से विमुख करने के लिये तालिबानी आतंकियों ने ट्रक बमबारी का अति विनाशकारी तरीका काम में लिया। किन्तु आतंकी यह नहीं समझ सके कि शिप्रा जैसी तेजस्वनी की असहय दु:खद मृत्यु अफगानिस्तान में पुनर्वास की गतिविधियों से जुड़े कार्यकर्ताओं को नई चुनौतियों से दो–दो हाथ करने के लिये सदैव प्रेरित करती रहेगी।

सकारात्मकता की तेजपुंज शिप्रा जिस संगठन से भी जुड़ी, उसके माहौल को उल्लास बनाने में वह सफल रही। उसने जिस कार्यसंस्कृति का सृजन किया, उसमें सतत परिश्रम और अपनी सामर्थ्य का अधिकतम प्रयोग करने जैसी बातों को केन्द्रीय स्थान प्राप्त था। कुशलतापूर्वक कार्यनिष्पादन उसकी दूसरी प्रकृति थी। सूर्यनगर की इस नामचीन बेटी के लिये तो यही कहना है कि –

बड़ी मुश्किल से होता है
ऐसा कोई हजारों में
हर नक्शे कदम जिसका
शामिल हो यादगारों में। ❑

सी–३, रतन स्मृति पंचवटी, कॉलोनी,
रातानाडा–जोधपुर–३४२०११

दूसरा दशक

फलोदी में विज्ञान मेला – २०१६

दो दिवसीय आवासीय विज्ञान मेले का आयोजन दिनांक–२५–२६ फरवरी, २०१६ को दूसरा दशक, फलोदी में किया गया। इस आयोजन का उद्देश्य नई पीढ़ी में विज्ञान को लोकप्रिय करने था। विज्ञान मेले में विज्ञान को सरलता से समझने के लिए कई स्टॉल्स व गतिविधियां आयोजित की गयीं। इस विज्ञान मेले के दो दिनों में ३५०० से अधिक किशोर–किशोरियों ने भाग लिया। बड़े–बड़े समूहों में स्कूल के विद्यार्थियों की टोलियों ने विज्ञान मेले में भागीदारी निभाई।

विज्ञान विषय के विभिन्न पहलुओं की समझ बढ़ाने, रचनात्मक प्रवृत्ति एवं अभिव्यक्ति का विकास के उद्देश्य से विभिन्न विद्यालयों के विद्यार्थियों ने विज्ञान के ग्लोबल वार्मिंग, पानी से बिजली बनाना, ज्वालामुखी, पर्यावरण सुरक्षा के लिए पॉल्यूसन मॉडल्स तैयार किये। तैयार मॉडल्स को छात्र–छात्राओं ने प्रदर्शित किया खास बात यह रही कि इन मॉडल्स के प्रस्तुतिकरण में अध्यापकों की उपस्थिति नहीं थी। मॉडल्स का बड़ी संख्या में वहां के निवासियों व अभिभवकों ने अवलोकन किया और उनकी सराहना की। श्रेष्ठ मॉडल्स का चयन करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय स्तर के अध्यापकों की एक टीम बनायी गयी जिसने विद्यार्थियों से उनके स्टाल्स पर जाकर बात की।

मेले में शिक्षण की सहायक सामग्री, जलेबी और कोफ्ते का विज्ञान, फोटोग्राफी, मनोरंजक खेल, कागज की टोपियां, चित्रकला, कृषि विज्ञान, कुम्हार का चौक आदि स्टॉल लगायी गयी।

मेले में आने वाले सभी बच्चों को ओरीगेमी की स्टाल ने बहुत आकर्षित किया। बच्चों ने कागज की टोपी बनायी तथा इसे पहनकर पूरे समय मेले में घूमते नजर आये। मेले में आये बच्चों ने मिट्टी के बर्तन बनाने सीखे तथा कुम्हार के चाक के माध्यम से दीपक, मटकी, सकारो, सुराही आदि की तकनीक को सीखा।

मनोरंजन एवं जीव जंतुओं के प्रति संवेदनशील जागृत करने के उद्देश्य से बच्चों ने ऊंट की सवारी का लुफ्त उठाया।

इस मेले में फलोदी सहित लोर्डिया, खीचन, जागरियां, खारा, बाप, शेखासन, नूरे की भुर्ज, भड़ला आदि के अड़तीस विद्यालयों के विद्यार्थियों ने भाग लिया।

मेले का अवलोकन सहायक कलेक्टर, संयुक्त शिक्षा निदेशक, वरिष्ठ वैज्ञानिकों, सहित अनेक गणमान्य लोगों ने किया।

मेले के समापन पर संभागियों को मोमेन्टो एवं प्रमाण पत्र देकर सम्मानित किया गया। परियोजना निदेशक मुरारीलाल थानवी ने सभी का आभार व्यक्त किया। इस अवसर पर प्रीति राठौड़, राजेन्द्र बोहरा, कमल शर्मा, अमरू चौधरी, भंवरलाल, श्री मुकद्दअली, श्री मोती, बीरबलराम उपस्थित थे। ❑

– मुरारीलाल थानवी, फलोदी

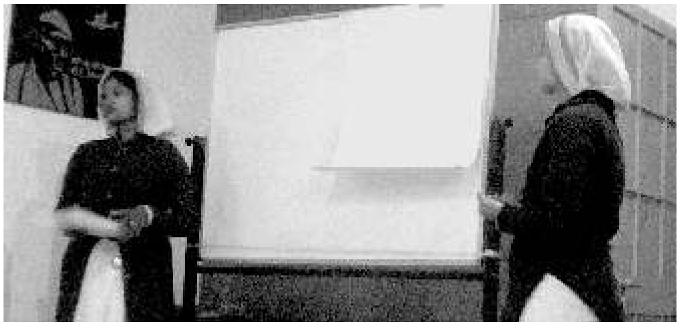

२६–२८ फरवरी २०१९

साक्षरता शिक्षण प्रशिक्षण–१

लेडी बैम्फोर्ड चेरीटीबल ट्रस्ट, भंभोरिया के साथ कार्य कर रही स्वयं सहायता समूह की महिलाओं के लिए साक्षरता शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया गया। यह प्रशिक्षण राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति, जयपुर में २६–२८ फरवरी २०१९ दिवसों में संचालित किया गया। प्रशिक्षण में **लेडी बैम्फोर्ड चेरीटीबल ट्रस्ट, भंभोरिया** की ओर से ११ महिलाओं ने प्रशिक्षण में भाग लिया। ये सभी महिलाएं २३ से २९ आयुवर्ग की थीं। ये कक्षा ८वीं से स्नातकोत्तर तक शिक्षित थीं। सभी महिलाएं स्वयं सहायता समूह की सदस्य है। किन्तु साक्षरता संबंधी प्रशिक्षण सभी के लिए पहला था। सभी प्रशिक्षणार्थियों से प्रशिक्षण संबंधी अपेक्षाएं प्राप्त की गई। ज्ञात हुआ कि वे जानना चाहती हैं कि निरक्षरों को साक्षर कैसे बनायें? महिलाओं का शैक्षिक स्तर कैसे बढ़ायें? महिलाओं को शैक्षिक रूप से व आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर कैसे बनाएं। साक्षरता क्या है?

प्रशिक्षण के प्रारम्भ में प्रशिक्षण की संकल्पना पर बातचीत प्रारम्भ हुई। जो कि संभागियों की प्रशिक्षण से अपेक्षाओं व प्रशिक्षण के लिए निर्धारित उद्देश्यों की एकरूपता पर आधारित थी। साक्षरता–कर्मी की प्रभावी भूमिका, साक्षरता संबंधी पठन–पाठन सामग्री का परिचय, प्रवेशिका आदर्श पाठ प्रदर्शन, प्रवेशिका के पाठों का अभ्यास, संभागियों द्वारा प्रवेशिका पाठ प्रदर्शन, महिला सशक्तिकरण एवं स्वयं सहायता समूह की निरन्तरता, वित्तीय साक्षरता (बचत, निवेश एवं ऋण की जानकारी), क्षेत्र की समस्याएं एवं जरूरतें तथा उनके स्वयं के स्तर पर समाधान, रिपोर्ट लेखन की जानकारी, नवीन तकनीकी संसाधनों के उपयोग की जानकारी, पुस्तकालय एवं वाचनालय का प्रबन्धन, कानूनी अधिकारों की जानकारी, मासिक योजना तैयार करना आदि बहुत सारी जिम्मेदारियों के बारे में सभी संभागियों को अवगत कराया।

प्रशिक्षण बहुत आत्मीय वातावरण में सम्पन्न हुआ। सभी शिक्षार्थी बहुत खुश होकर एवं प्रशिक्षण में प्राप्त जानकारियों से पूरी तरह लाभान्वित होकर विदा हुईं। सबके लिये यह विदाई दुखद थी। मगर सीखने का सुख वे साथ लेकर जा रही थीं। ❑

–बटीना मलिक

१४–१६ मार्च २०१६

साक्षरता शिक्षण प्रशिक्षण–२

जन कला साहित्य मंच जयपुर जिले के जयरामपुरा, जाहोता, कालाडेरा व चित्तौड़गढ़ जिले के आकोला गांव में महिलाओं के साथ कौशल विकास का कार्य कर रहा है। इन महिलाओं के साथ कार्य करने के दौरान संस्था ने उनके साक्षर होने की आवश्यकता को जाना। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु क्षेत्र में कार्य कर रहे कार्यकर्ता का प्रशिक्षण राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति द्वारा जयपुर में १४-१६ मार्च २०१६ तक आयोजित किया गया। सभी कार्यकर्ताओं को क्षेत्र में कार्य करने का खासा अनुभव था। अधिकांशत: कार्यकर्ता लम्बे समय से जनकला साहित्य मंच के साथ लम्बे समय से कार्य कर रहे हैं।

प्रशिक्षण में आए सभी प्रशिक्षणार्थी आपस में एक दूसरे से पूर्णतया परिचित थे। समिति के सदस्यों से सभी का परिचय हुआ। प्रशिक्षण संबंधी संकल्पना संभागियों को बतायी गई। प्रशिक्षण में साक्षरता की अवधारणा एवं समाज में सभी समुदायों के साथ सामाजिक उत्थान के लिये काम करने की प्रतिबद्धता पर विस्तार से विचार हुआ। सारे संभागियों को निरक्षर समाज में फैले विभिन्न अंधविश्वासों, ढकोसलों एवं टोना-टोटकों और बुरे रीति-रिवाजों के प्रति आवाज उठाने का संकल्प जगाने का प्रयास भी किया गया।

प्रशिक्षण में साक्षरता शिक्षण की विधियों पर भी चर्चा हुई और साक्षरता साहित्य परिचय भी विस्तार से दिया गया। प्रशिक्षण बहुत आत्मीय वातावरण में एवं आवासीय प्रबंध के साथ आयोजित किया गया। प्रशिक्षण की सफलता सभी प्रशिक्षणार्थियों के चेहरे पर झलकती थी और सभी प्रशिक्षणार्थियों को यहां से घर जाने का बड़ा मलाल था। ❑

–बटीना मलिक

13 मार्च 2019

देवलिया कलां
ग्रामसखी संवाद

13 मार्च 2019 को राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति के साथी–सहयोगी लेडी बैम्फोर्ड चैरीटीबल ट्रस्ट के अधिकारियों एवं कार्यकर्ताओं के साथा ग्राम देवलिया कलां की यात्रा पर गये। देवलियां कलां भंभोरियो से कुछ आगे बगरू खुर्द होते हुए पहुंचा जा सकता है। ये सारे गांव अजमेर जाने वाले राष्ट्रीय राजमार्ग के किनारे स्थित हैं। इन गांवों के आस–पास बड़ी–बड़ी कम्पनीयों ने बहुत आक्रामक रूप से अपना वर्चस्व फैला लिया है। कई बहुमंजिला इमारतें खड़ी हो गई हैं और कुछ खड़ी हो रही है। गांव उनके बीच दुबके हुए से लगते हैं। इन दुबके हुए गरीब गांवों में से एक गांव देवलिया कलां भी है।

हम लोग भी 13 मार्च को वहां पहुंचे थे। आयोजन का नाम था ग्रामसखी संवाद। उद्देश्य यह था कि 40 साल से कम उम्र की महिलाओं के साथ सार्थक संवाद किया जाये और इस संवाद से उनके मन में ग्राम सेवा के प्रति एवं ग्रामोत्थान के प्रति एक इच्छा और उत्साह जगाया जाये। तीस से अधिक औरतें वहां इकट्ठी हुई थी। मंदिर के पास एक खुले बरामदे में। मन में उत्साह था और बात करने की ललक भी उनके हाव–भाव से साथ झलकती थी। सबके मन में कोई बात थी और हर औरत कुछ कहना चाहती थी। हमें तो उनसे सखी भाव के साथ रिश्ता जोड़ना था कि वे आगे अपने काम को समझ कर उसमें जुड़ जायें।

लेडी बैम्फोर्ड चैरीटीबल ट्रस्ट के अधिकारी और उनकी पूरी टीम अपने साजो–सामान के साथ वहां खड़ी थी। पूरी मुस्तैदी के साथ। उस टीम में बड़े–बड़े कैमरा वाले भी थे और ड्रोन से फोटाग्राफी करने का साधन भी अपने साथ लिये हुये थे।

इस संवाद के दरमयान बातचीत में और गीत–संगीत में एक समरसता व्याप्त गयी थी और संवाद पूरी तरह से अगले संबंधों के प्रति आशवस्त करते हुए समाप्त हुआ था। हम अगली यात्रा का आश्वासन देकर लौट आये थे। ❑

–बटीना मलिक

विद्यालयों में ई वेस्ट आधारित जागरूकता कार्यक्रम

वर्तमान समय में दुनिया भर में ई वेस्ट का निस्तारण एक बहुत बड़ी समस्या है जागरूकता फैलाने के लिए विश्व भर में कई तरह के कार्यक्रमों और गतिविधियों का आयोजन किया जाता है। राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति और गुड़गांव स्थित करो संभव के बीच जयपुर के पब्लिक स्कूलों में ई वेस्ट पर आधारित जागरूकता के लिए एक सहमति बनी। इसके तहत जयपुर के चुनिंदा पब्लिक स्कूलों में ई वेस्ट और इसके दुष्परिणामों पर स्कूल के बच्चों से बातचीत कर उन्हें जागरूक करने का प्रयास किया गया। बच्चे क्योंकि आने वाले कल का भविष्य हैं और इलेक्ट्रॉनिक उत्पादों के प्रमुख ग्राहक भी। इसलिए उनके बीच इस बारे में बात करना ज्यादा महत्वपूर्ण है। जयपुर के सात स्कूलों के बच्चों के साथ हमारी जिनमें ई वेस्ट क्या है? वर्तमान में विश्व भर में ई वेस्ट की क्या स्थिति है? ई वेस्ट पर बात करना क्यों महत्वपूर्ण है? ई वेस्ट का सुरक्षित निस्तारण क्यों आवश्यक है? ई वेस्ट के असुरक्षित निस्तारण का पर्यावरण और मनुष्य की सेहत पर क्या प्रभाव पड़ता है? ई वेस्ट के सुरक्षित निस्तारण के लिए एक उपभोक्ता की दृष्टि से हम क्या करें क्या न करें?

यह जानकर अच्छा लगा कि बच्चे इस शब्द से परिचित थे। कोई भी इलेक्ट्रॉनिक या इलेक्ट्रिक सामग्री या उत्पाद जो खराब हो गई हो, आउटडेटेड हो गई हो या हमारे काम नहीं आ रही हो वह हमारे लिए ई वेस्ट की श्रेणी में आएगी। ई वेस्ट दुनिया में सबसे ज्यादा बढ़ते वेस्ट में से एक है।

ई वेस्ट में मेटल्स, प्लास्टिक और केमिकल्स होते हैं और अगर इसे सही तरीके से निस्तारित या नियोजित नहीं किया जाए तो यह पर्यावरण के लिए खतरनाक होने के साथ साथ हमारी सेहत पर बहुत बुरा प्रभाव डालता है। भारत में ९५ प्रतिशत ई वेस्ट की प्रोसेसिंग का कोई फार्मल तरीका नहीं है। भारत में १०-१५ साल के ४-५ लाख बच्चे अनौपचारिक तरीके से ई वेस्ट की विभिन्न गतिविधियों से जुड़े हैं। अनुचित या असुरक्षित तरीके से अगर ई वेस्ट का निस्तारण या निपटान किया जाता है तो इसके कई दुष्परिणाम होते हैं।

यह मनुष्य के स्वस्थ्य पर प्रभाव डालता है। अनुचित तरीके से ई वेस्ट को पुनर्चक्रित (पुनर्चक्रित) या निपटान करने से लेड, कैडमियम, आर्सेनिक और क्रोमियम जैसी जहरीली गैसें निकलती हैं। ई वेस्ट को खुले में जलाने से हवा में हानिकारक टॉक्सिन्स घुलते हैं। जिन क्षेत्रों में ये गतिविधियां होती हैं वहां रहनेवाले लोगों खासकर बच्चों की सेहत पर इसका बहुत बुरा असर देखने को मिलता है। फेफड़े, दिमाग, किडनी आंख,कान, दिल आदि सभी अंगों पर इसका दुष्प्रभाव पड़ता है। बच्चों में याददाश्त की कमी, हाइपरऐक्टिव बिहैवियर, लर्निंग डिसएब्लिटीज, अनीमिया और अस्थमा जैसे कई रोग हो जाते हैं।

फरवरी के महीने में जयपुर के सात स्कूलों में इन्हीं बातों पर आधारित जागरूकता कार्यक्रम का आयोजन राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति ने किया जिनमें लगभग ग्यारह सौ बच्चों और शिक्षकों के साथ बातचीत की गई। ❑

–रचना सिद्धा

विश्व रंगमंच दिवस पर समिति में आयोजन

पारसी थियेटर व्यवसायगत रंगमंच के रूप में ही लोगों को याद है जिसके क्लासिक नाटकों की लंबी फेहरिश्त विस्मृत हो चुकी है। लोगों की स्मृतियों में उसके हास्य प्रहसन और तमाशाई टुकड़े ही बचे रहे हैं।

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति में आज बुधवार २७ मार्च, २०१९ को 'विश्व रंगमंच दिवस' पर इप्टा के राष्ट्रीय अध्यक्ष रणवीरसिंह 'जंग-ए-आज़ादी में पारसी थियेटर की ख़िदमात' विषय पर अपने सारगर्भित व्याख्यान में इसके उन पहलुओं को रेखांकित किया जिनमें सत्ता को चुनौतियां ही नहीं दी गयी थी बल्कि सामाजिक न्याय और बराबरी तथा देश के लोगों की एकता के संदेश दिए गए थे।

रणवीरसिंह ने अपने व्याख्यान में १९०६ से लेकर १९४० तक की पारसी थियेटर की यात्रा का सिलसिलेवार विवेचन किया। उनका मानना था कि इस दौरान यह कंपनी थियेटर 'पोलिटिकल' हो गया था। पुराने आख्यानों को प्रतीक बना कर उसके नाट्यकारों ने अंग्रेजी हक़ूमत के खिलाफ जनमत बनाया। उसके प्रभाव को इसी से आंका जा सकता है कि उसके नाटकों को नियंत्रित करने के लिए ब्रितानवी हक़ूमत को 'ड्रैमेटिक परफॉर्मेंस एक्ट' बनाना पड़ा जिसमें जिलाधिकारियों को उन्हें सेंसर करने के अधिकार दिए गए।

उन्होंने पारसी थियेटर के नाटकों की तुलना प्याज से की जिसमें अनेक परतें होती हैं। नाटकों को जानने के लिए उनकी एक-एक परत को छीलना होता है, समझना होता है।

पारसी थियेटर के सम्पूर्ण भारत में विस्तार की जानकारी देते हुए उनका कहना था कि वह एक ट्रेवलिंग थियेटर था जिसने नार्थ वेस्ट फ्रंटियर प्रांतों से लगाकर सीलोन और बर्मा तक घूम-घूम कर नाटक खेले।

उसके नाटकों से हम सीख सकते हैं कि सेंसरशिप के बावजूद कैसे नाटक लिखे जा सकते हैं।

पारसी थियेटर में गीतों की अहमियत को रेखांकित करते हुए रणवीर सिंह का कहना था कि वे नाटक लफ़्ज़ों को संगीत देते थे।

व्याख्यान को सुनने के लिए शहर के जाने माने साहित्यकार, रंगकर्मी और पत्रकार मौजूद थे। हरिदेव जोशी पत्रकारिता विश्वविद्यालय के नवनियुक्त कुलपति ओम थानवी तथा पूर्व कुलपति सनी सेबेस्टियन भी श्रोताओं में मौजूद थे।

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति के अध्यक्ष रमेश थानवी ने अध्यक्षता की। ❑ **रा. बो.**

कवि भवानीप्रसाद मिश्र का जन्मोत्सव

सदी के प्रमुख गीतकारों में से एक भवानीप्रसाद मिश्र को राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति में २९ मार्च, २०१९ को उनकी जयंती पर सुरीली श्रद्धांजलि दी गयी। भवानी भाई के बड़े बेटे अमिताभ मिश्र जो खुद अनूठे संगीतकार हैं। जिन्होंने अपने पिता के गीतों को संगीत में बांधा है और इस अवसर पर संगीतमय प्रस्तुति दी।

अमिताभ मिश्र ने बताया कि उन्होंने छह वर्ष की छोटी सी आयु से ही अपने पिता के गीतों को धुनों में बांधना शुरू कर दिया था। उस गीत को भी उन्होंने गा कर सुनाया जिसे उन्होंने अपने बचपन में पहली बार धुन में बांधा था। अमिताभ मिश्र का कहना था कि भवानीप्रसाद मिश्र जैसे कवियों ने आजादी की जंग में विद्रोह के स्वर जगाये। अपने दौर के खिलाफ बोलना सिखाया।

इस अवसर पर भवानीप्रसाद मिश्र के एक खंडकाव्य का विमोचन हरिदेव जोशी पत्रकारिता एवं जनसंचार विश्व विद्यालय के कुलपति ओम थानवी ने किया। उन्होंने कहा कि भवानी भाई की कविताओं में राजनीति साफ नजर आती है क्योंकि वे प्रतिरोध करती हैं।

कवियित्री अंजु ढड्ढा मिश्र ने समापन टिप्पणी में कहा कि अमिताभ जी ने अपनी संगीत रचनाओं में मंद स्वरों का संदेश दिया है। इस बढ़ते शोर के जमाने में कविताएं जीवित रहेंगी तो जीवन की सरसता बनी रहेगी।

इस कार्यक्रम में शामिल होने के लिए लेखिका मंजूरानी सिंह शांति निकेतन से चल कर जयपुर आई। ❑

-राजेन्द्र बोड़ा